संत श्री आशारामजी आश्रम द्वारा प्रकाशित

हिन्दी

मूल्य : ₹ ६
१ अक्टूबर २०१२
वर्ष : २२ अंक : ४
(निरंतर अंक : २३८)
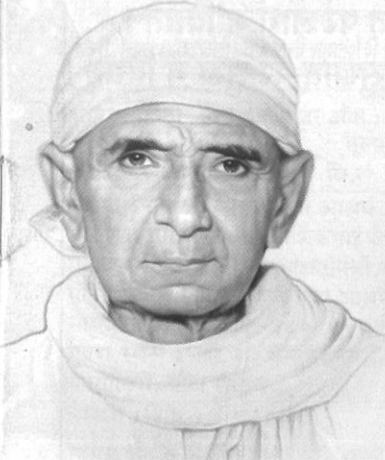
भगवत्पाद साँईं
श्री लीलाशाहजी महाराज

पूज्य बापूजी का ४८वाँ आत्मसाक्षात्कार दिवस १७ अक्टूबर
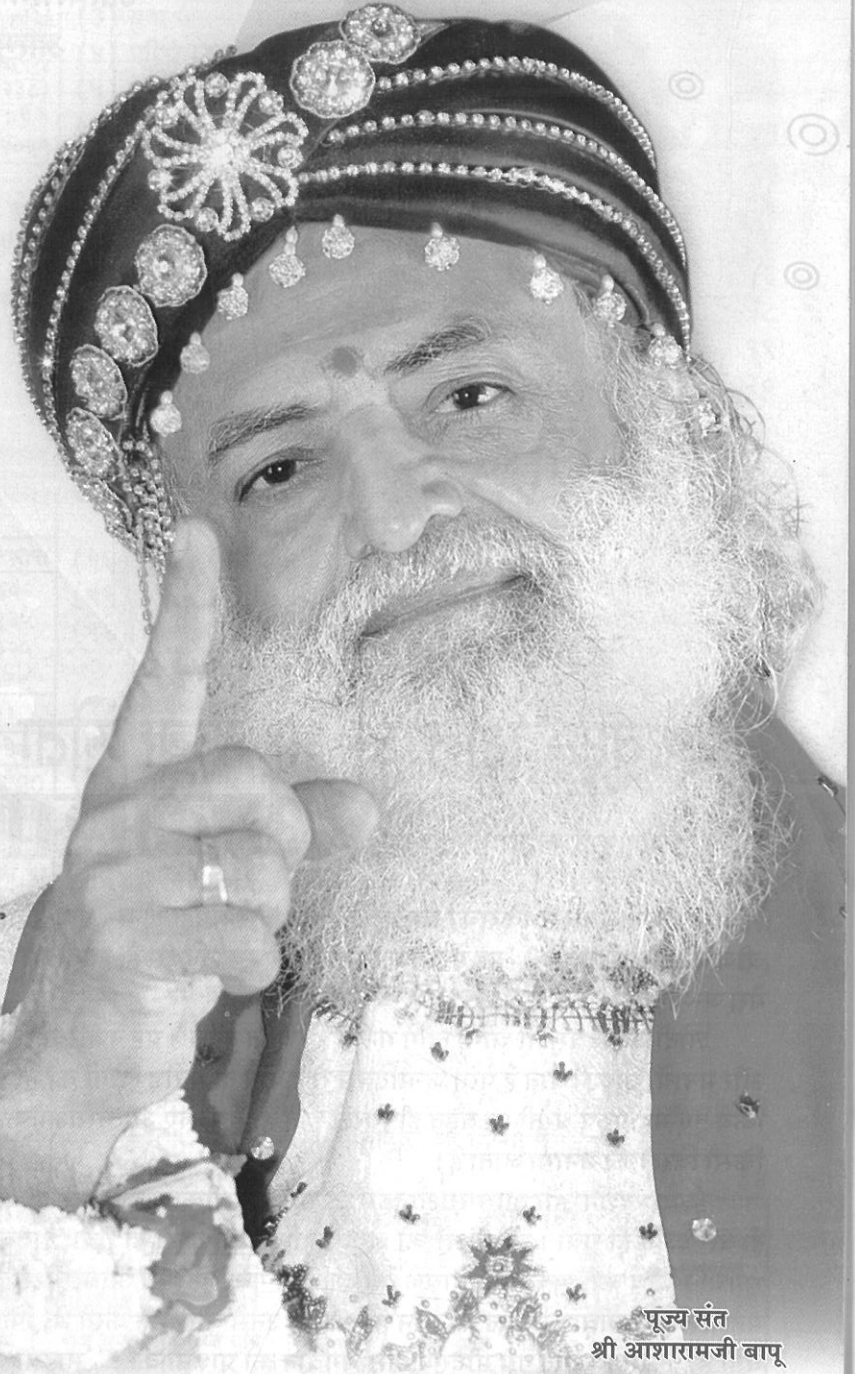
पूज्य संत
श्री आशारामजी बापू

केवल एक पूर्ण सद्गुरु में ही ऐसा सामर्थ्य होता है जो आवागमन के चक्कर से, काल की ठोकरों से बचाकर शिष्य को संसार के दुःखों से ऊपर उठा देता है। सद्गुरु जैसा हितैषी संसार में कोई भी नहीं हो सकता।

आत्मज्ञानात् परं ज्ञानं न विद्यते ।
आत्मलाभात् परं लाभं न विद्यते ।
आत्मसुखात् परं सुखं न विद्यते ।

पूज्य बापूजी का ४८वाँ
आत्मसाक्षात्कार दिवस
१७ अक्टूबर

ईश्वर-दर्शन से भी ऊँचा होता है आत्मसाक्षात्कार

(पूज्य बापूजी का सत्संग-प्रसाद)

आत्मसाक्षात्कार किसको बोलते हैं ? यह जरा समझ लेना । एक होता है कि मनुष्य ने संसार में किसी चीज की उपलब्धि की - 'यह मेरा फलानी उपलब्धि का दिवस है, शादी का दिवस है... ।' दूसरा होता है, 'यह मेरा जन्मदिवस है ।'

शादी का दिवस तो भोगी लोग मनाते हैं । बहुत तुच्छ है यह नजरिया । जन्मदिवस तो बहुत लोग मनाते हैं और मनायें, अच्छी बात है परंतु जन्मदिवस रोज पौने दो करोड़ लोगों का होता है धरती पर । आत्मसाक्षात्कार किये हुए महापुरुष धरती पर बहुत ही विरले होते हैं, इसलिए आत्मसाक्षात्कार दिवस तो कहीं-कहीं किसी-किसी विरले का मनाया जाता है ।

ईश्वर-दर्शन और आत्मसाक्षात्कार... भगवान श्रीकृष्ण का दर्शन हो गया, श्रीकृष्ण ने बातचीत की यह ईश्वर-दर्शन हो गया । प्रचेताओं को भगवान शिव का दर्शन हो गया, भगवान नारायण का दर्शन हो गया । भगवान शिव का, भगवान नारायण का दर्शन हो गया फिर भी आत्मसाक्षात्कार बाकी रह जाता है । नामदेव महाराज को भगवान विट्ठल के दर्शन होते थे, वे उनसे बातचीत करते थे, फिर भी संतों ने कहा कि 'तू कच्चा घड़ा है ।' नामदेव चले गये मंदिर में और भगवान को प्रार्थना की : ''माझ्या पांडुरंगा ! लवकर या... भगवान जल्दी प्रकट हो जाओ । मेरे को सभी संतों ने कच्चा घड़ा घोषित कर दिया है ।'' तो पांडुरंग प्रकट होकर बोले : ''संतों ने जो कहा है, ठीक ही कहा है ।''

''प्रभु ! आप तो बोलते हैं, 'नाम्या ! तू मुझे बहुत प्यारा है ।' आप प्रकट होकर मेरे से बातचीत करते हो, मेरे को स्नेह करते हो और फिर मैं कच्चा घड़ा कैसे ?''

(शेष पृष्ठ ४ पर)

ऋषि प्रसाद

मासिक पत्रिका

हिन्दी, गुजराती, मराठी, ओड़िया, तेलुगू, कन्नड़, अंग्रेजी, सिंधी, सिंधी (देवनागरी) व बंगाली भाषाओं में प्रकाशित

वर्ष : २२ अंक : ४
भाषा : हिन्दी (निरंतर अंक : २३८)
१ अक्टूबर २०१२ मूल्य : ₹ ६
आश्विन-कार्तिक वि.सं. २०६९

स्वामी : संत श्री आशारामजी आश्रम
प्रकाशक और मुद्रक : श्री कौशिकभाई पो. वाणी
प्रकाशन स्थल : संत श्री आशारामजी आश्रम, मोटेरा, संत श्री आशारामजी बापू आश्रम मार्ग, साबरमती, अहमदाबाद -३८०००५ (गुजरात)
मुद्रण स्थल : हरि ॐ मैन्युफेक्चरर्स, कुंजा मतरालियों, पौंटा साहिब, सिरमौर (हि.प्र.) - १७३०२५
सम्पादक : श्री कौशिकभाई पो. वाणी
सहसम्पादक : डॉ. प्रे.खो. मकवाणा, श्रीनिवास

सदस्यता शुल्क (डाक खर्च सहित)

भारत में

अवधि	हिन्दी व अन्य भाषाएँ	अंग्रेजी भाषा
वार्षिक	₹ ६०	₹ ७०
द्विवार्षिक	₹ १००	₹ १३५
पंचवार्षिक	₹ २२५	₹ ३२५
आजीवन	₹ ५००	-----

विदेशों में (सभी भाषाएँ)

अवधि	सार्क देश	अन्य देश
वार्षिक	₹ ३००	US $ 20
द्विवार्षिक	₹ ६००	US $ 40
पंचवार्षिक	₹ १५००	US $ 80

कृपया अपना सदस्यता शुल्क या अन्य किसी भी प्रकार की नकद राशि रजिस्टर्ड या साधारण डाक द्वारा न भेजें। इस माध्यम से कोई भी राशि गुम होने पर आश्रम की जिम्मेदारी नहीं रहेगी। अपनी राशि मनीऑर्डर या डिमांड ड्राफ्ट ('ऋषि प्रसाद' के नाम अहमदाबाद में देय) द्वारा ही भेजने की कृपा करें।

सम्पर्क पता : 'ऋषि प्रसाद', संत श्री आशारामजी आश्रम, संत श्री आशारामजी बापू आश्रम मार्ग, साबरमती, अहमदाबाद-३८०००५ (गुज.)
फोन : (०७९) २७५०५०१०-११, ३९८७७७८८
e-mail : ashramindia@ashram.org
web-site : www.ashram.org
www.rishiprasad.org

इस अंक में...

विभिन्न टीवी चैनलों पर पूज्य बापूजी का सत्संग

चैनल	समय
A2Z NEWS	रोज प्रातः ३, ५-३०, ७-३० बजे, रात्रि १० बजे तथा दोपहर २-४० (केवल मंगल, गुरु, शनि)
आस्था	रोज सुबह ९-४० बजे
Care World	रोज सुबह ७-०० बजे
सत्संग टी.वी.	रोज रात्रि १०-०० बजे
वरदान	रोज सुबह ८-४० बजे
अध्यात्म टी.वी.	रोज सुबह ९-०० बजे
MAGIK TV	रोज सुबह ६-०० बजे व शाम ६-३० बजे
मंगलमय चैनल	www.ashram.org पर उपलब्ध

सजीव प्रसारण के समय नित्य के कार्यक्रम प्रसारित नहीं होते।

✽ 'A2Z चैनल' बिग टीवी (चैनल नं. ४२५) पर उपलब्ध है।
✽ 'आस्था चैनल' बिग टीवी (चैनल नं. ६५०) पर उपलब्ध है।
✽ 'मंगलमय चैनल' इंटरनेट पर **www.ashram.org/live** लिंक पर उपलब्ध है।

(मुखपृष्ठ २ से 'ईश्वर-दर्शन से भी ऊँचा होता है आत्मसाक्षात्कार' का शेष)

''तुम मुझे और अपने को अलग मानते हो तथा संसार को सच्चा मानते हो। तुम्हारा नजरिया कच्चा है। संसार मेरी सत्ता से कैसे विलसित हुआ है, तुम्हारा शरीर और तुम मेरी सत्ता से कैसे मेरे में अभिन्न हो - इसका ज्ञान जब तक तुम्हें नहीं होता तब तक तुम्हारी स्थिति कच्ची है। संत विसोबा खेचर के पास जाओ। वे तुमको ब्रह्मज्ञान का उपदेश देंगे, तभी तुम पक्का घड़ा होओगे।'' नामदेवजी संत विसोबा खेचर के चरणों में गये, उपदेश लिया तब आत्मसाक्षात्कार हुआ।

अर्जुन को श्रीकृष्ण मिले थे फिर भी अर्जुन के सब दुःख नहीं मिटे थे। भगवान के विराट रूप का दर्शन हुआ लेकिन उसका भय नहीं गया था। श्रीकृष्ण थे तब भी अर्जुन की किंकर्तव्यमूढ़ता नहीं गयी परंतु जब उसको श्रीकृष्ण का तत्त्वज्ञान-उपदेश मिला और उसने विचार करके अपने-आपमें गोता मारा तो अर्जुन को आत्मसाक्षात्कार हुआ। तो ईश्वर-दर्शन से भी ऊँचा होता है आत्मसाक्षात्कार!

आत्मसाक्षात्कार के दिन सभी लोग आश्रमों में भोजन करोगे, गरीब-गुरबों को कराओगे लेकिन अब आत्मसाक्षात्कार के लिए भी तैयारी कर लो। जब बापू को वह हो सकता है तो बेटों को क्यों नहीं हो सकता!

आत्मसाक्षात्कार के सिवाय जो कुछ मिलेगा वह आपके पास टिकेगा नहीं। मैं शाप नहीं देता हूँ, सच्चाई बता रहा हूँ। शरीर ही जब टिकेगा नहीं तो मिली हुई वस्तु, मिली हुई पदोन्नति, मिली हुई पदवियाँ, मिली हुई वाहवाही कब तक टिकेगी?

कह रहा है आसमाँ यह समाँ कुछ भी नहीं।
रोती है शबनम कि नैरंगे जहाँ कुछ भी नहीं॥
जिनके महलों में हजारों रंग के जलते थे फानूस।
झाड़ उनकी कब्र पर है और निशाँ कुछ भी नहीं॥

ऐसे बड़े-बड़े राजाओं के राज्य नहीं टिके, लंकेश्वर की एक ईंट नहीं टिकी, हिरण्यकशिपु का हिरण्यपुर नहीं टिका तो तुम्हारा-हमारा ईंट-चूने का मकान कब तक टिकेगा? जो कभी न मिटे उसको 'मैं' रूप में जानना इसका नाम है आत्मसाक्षात्कार। और जो मिट जाय उसको 'मैं' मानकर फिर देवी-देवताओं या भगवान का दर्शन करना यह भगवद्दर्शन है। भगवद्दर्शन में प्रेम की, भाव की विशेषता होती है और आत्मसाक्षात्कार में प्रेम, भाव के साथ समझदारी की पराकाष्ठा होती है।

भगवान कहते हैं कि मेरी बात अगर मान लोगे तो दुःख टिकेगा नहीं और मेरी बात का त्याग करके कुछ भी कर लोगे तो दुःख सदा के लिए मिटेगा नहीं। तो भगवान की बात क्या है?

वासुदेवः सर्वमिति...

अभी भले तुमने उसको नहीं जाना तो मान तो लो कि सर्वत्र वासुदेव है। और सर्वत्र वासुदेव है इसका अनुभव करने के लिए संतों का संग और भगवान का सुमिरन करो, सुमिरन का अभ्यास बढ़ाओ। संत कबीरजी कहते हैं :

सुमिरन ऐसा कीजिये खरे निशाने चोट।
मन ईश्वर में लीन हो हले न जिह्वा होठ॥

सुमिरन तो पहले दीर्घ किया जाता है। जैसे - हरि ओऽ...म्... फिर होंठों में हरि ॐ... फिर कंठ में। कभी कंठ में, कभी हृदय में तो कभी-कभी कंठ और हृदय छोड़कर ऐसे ही सुमिरन हो रहा है, उसे देखते जाओ। मन इधर-उधर जाय, फिर थोड़ा अभ्यास करो। बीच में कभी जोर से उच्चारण किया, फिर शांत हो गये। ऐसा अभ्यास बढ़ाओ और भगवत्सुमिरन करते-करते संसारी कार्य करो। संसारी कार्य भी इस उद्देश्य से करो कि हमें ईश्वरप्राप्ति करनी है।

परदुःखकातर और परहितपरायण होकर कर्म करो, जिससे अंतर्यामी प्रसन्न हों। तो बोले : 'महाराज! दूसरों की भलाई के लिए करेंगे तो फिर खायेंगे क्या?'

मैं जो कुछ करता हूँ, दूसरों की भलाई के लिए करता हूँ तो खाने की मुझे कोई कमी रखी क्या समाज ने? अरे बाइक, स्कूटर काम में आता है तो उसको ऑयल, पानी, पेट्रोल मिलता है फिर यदि आप समाज के काम आयेंगे, ईश्वर के काम आयेंगे तो आपको कमी क्या रहेगी!

तो आप जो भी काम करते हैं, समाजरूपी ईश्वर की प्रसन्नता के लिए ईमानदारी से करो। अपनी आवश्यकता कम-से-कम रखो और परमात्मा में प्रीति अधिक-से-अधिक बढ़ाते जाओ। परमात्मा के प्यारों का संग और उनके जीवन-चरित्र आदि पढ़ने से, शास्त्र पढ़ने-सुनने से भगवत्प्राप्ति का रास्ता आसान हो जायेगा।

आत्मसाक्षात्कार जैसी पराकाष्ठा मेरे को ४० दिन में प्राप्त हो सकती है तो आपको अगर ४० साल में भी हो जाय तो भी सौदा सस्ता है। क्योंकि मुझे तड़प तो थी और फिर जैसे लाइट की फिटिंग हो गयी तो ४० दिन में तो क्या ४० सेकंड में भी बटन दबाओ तो बत्ती जल जाती है। जितनी आपकी तड़प और तैयारी होगी उतनी ही जल्दी वह भूमिका बन जायेगी। तो महापुरुष की थोड़ी-सी कृपा, जरा-सा उपदेश... कुंजी घुमाने में कितनी देर लगती है, उतना ही बस, आत्मसाक्षात्कार गुरुजी की कृपा से हो जाता है। शुकदेवजी महाराज का सत्संग सुनकर राजा परीक्षित को ७ दिन में हो गया, मुझे तो ४० दिन लग गये। महावीरजी को १२ साल लगे तब भी सौदा सस्ता है। मुझे केवल ४० दिन में ही हो गया ऐसा नहीं है। मैं भी बचपन से लगा था लेकिन तड़प ४० दिन के अंदरवाली तीव्रतम थी, उसने काम कर लिया। तो जितनी ईश्वरप्राप्ति की तड़प होगी, उतनी ईश्वर और गुरु की कृपा जल्दी हो जाती है।

अपना साधन यह है कि गुरुआज्ञा मानने की योग्यता ले आओ बस ! जब ईश्वरप्राप्ति की तड़प हो और गुरु की कृपा हो तो जैसे एक घड़े का पानी दूसरे घड़े में, एक पतीली का घी दूसरी पतीली में, ऐसे ही एक ब्रह्मवेत्ता की निष्ठा का संकल्प दूसरे में टिकता है। जैसे ज्योत से ज्योत जलती है, ऐसे ही एक ब्रह्मज्ञानी से दूसरा ब्रह्मज्ञानी बनता है, जिसके आगे दुनिया की सभी उपलब्धियाँ नगण्य हैं। तो आत्मज्ञान सब ज्ञानों से ऊँचा है, आत्मलाभ सब लाभों से ऊँचा है, आत्मसुख सब सुखों से ऊँचा है। **आत्मज्ञानात् परं ज्ञानं न विद्यते। आत्मलाभात् परं लाभं न विद्यते। आत्मसुखात् परं सुखं न विद्यते।** □

आखिरी चाबी गुरुदेव ने लगायी

(पूज्य बापूजी के आत्मसाक्षात्कार दिवस पर विशेष)

(आत्मनिष्ठ पूज्य बापूजी का सत्संग-प्रसाद)

मुझको साधनाकाल में ध्यान की गहराइयों में आनंद तो आता था और उसमें टिकने का भी सब कुछ हो गया था फिर भी रहता था कि गुरुजी जैसे तो बने न !

मृत गाय दिया जीवन दाना,
तब से लोगों ने पहचाना।

यह सब ठीक है लेकिन मन में रहता था कि अब भी कुछ पूर्णता होनी चाहिए। ४० दिन में काम तो बन गया लेकिन पूर्णता की अब भी थोड़ी प्यास बनी रही। तो एक सुबह को लगभग साढ़े चार बजे का समय होगा। गुरुजी प्रभात को उठ जाते। कमरे में पर्दा लगा रहता। अंदर गुरुजी अपना आसन करते रहते और बाहर हम और दूसरे जो भी दो-चार खास गुरुजी के कृपापात्र होते, वे शास्त्र पढ़ते। सुबह का सत्संग चल रहा था। गुरु तो वही हैं जो शिष्य के हृदय में अधिष्ठानरूप में बैठे हैं और सब जगह हैं। आपके मन में, बुद्धि में क्या आता है उसकी गहराई में कोई है चैतन्य, वह जानता है और गुरुजी तो उसमें स्थित हैं। तो सुबह-सुबह गुरुजी ने क्या कृपा बरसायी, पर्दा हटा के मेरी तरफ देखा फिर इधर-उधर नजर डालकर कहा : ''कुछ लोग सोचते हैं कि हैं तो हम ब्रह्म, असत्त्वापादक आवरण, अभानापादक आवरण यह सब हट गया लेकिन हम साँईंजी जैसे बन जायें।''

गुरुजी बड़े सहज थे। गुरुजी के साथ बिताया

हुआ समय, उस समय इतना महत्त्वपूर्ण नहीं लगता था जितना अभी उनकी यादें रसमय हो जाती हैं। तो गुरुजी ने सिर पर गीता उठायी और कहा : ''कुछ लोग सोचते हैं कि हमें अभी ऐसा होना चाहिए, अभी और थोड़ा... । अरे ! जो लीलाशाह है वह तू है, जो तू है वह लीलाशाह है। गीता सिर पर उठा के बोलता हूँ, अभी तो मान ले !''

उन शब्दों में क्या कृपा थी ! क्या संकल्प था ! वह खटका निकल गया। फिर भी एक खटका बना रहा कि जब हम वे ही हैं तो बैठे रहें समाधि में। शिवजी इतने साल बैठे रहते हैं, शुकदेवजी महाराज इतने साल बैठते हैं। अब मैं रोज-रोज सत्संग करूँ, इधर जाऊँ, उधर जाऊँ... इससे तो हिमालय में जाकर समाधि लगाऊँ। तो फिर गुरुजी को परिश्रम दिया हमने।

गुरुजी सत्संग करते-करते मुझ पर नजर डालते हुए कहते : **''ख़लक जी ख़िज़मत खां न भायां बंदगी बेहतर.''** ख़लक की माने जनता की सत्संग द्वारा जो ख़िज़मत (सेवा) होती है, उससे बढ़कर बंदगी नहीं है, समाधि नहीं है - ऐसा गुरुजी बोलते थे और मैं समझ लेता था कि यह इधर का संकेत है।

मन है न, किसीको महत्त्व दे देता है तो बार-बार उधर को ही जाता है। जैसे सिगरेटबाज ने सिगरेट को महत्त्व दे दिया तो फिर थोड़ी देर में उठेगा, फूँकेगा। सुन तो रहे हैं लेकिन उठते ही वही करेंगे जिसको महत्त्व दिया है। ऐसे ही हमारा मन घूम-फिर के फिर वहीं... मोक्ष कुटिया भी ऐसी बनायी कि सत्संग के अलावा के समय में ध्यान-सुमिरन भी कर सकें। फिर एक छोटी-सी पुस्तक हाथ में आयी - 'ब्रह्म बावनी कथा', गुजराती में थी। उसमें लिखा था : **थातुं कोई नुं ध्यान हशे तो तेनुं प्रारब्ध तेवुं हशे.** मुझे संकेत मिल गया कि किसीकी ध्यान-समाधि लगती है तो उसका प्रारब्ध निवृत्तिप्रधान है और तुम्हारे को समय नहीं मिलता और सत्संग में गुरुजी का संकेत आ गया कि ऐसे करो तो तुम्हारा प्रारब्ध ऐसा है। इस तरह वह खटका भी निकल गया। तो अब एकांत में ध्यान में हैं, तब भी वही शांति-आनंद और भीड़ में आते हैं तब भी वही मस्ती ! इसको भगवान श्रीकृष्ण ने बहुत ऊँची अवस्था कहा - 'अविकम्प योग' ! समाधि में हैं तो हम अविकम्प हैं लेकिन उठे, इससे मिले - उससे मिले तो आनंद-शांति खो गयी तो वह योगाभ्यासी है, ध्यानयोगी है लेकिन तत्त्वज्ञानी तो अविकम्प योग में स्थित है।

उठत बैठत ओई उटाने,
कहत कबीर हम उसी ठिकाने।

समाधि में वही सुख और लेने-देने में भी वही सुख, वही शांति, वही आनंद... इसको बोलते हैं जीवन्मुक्त ! तो बहुत-बहुत बड़ी, बहुत-बहुत... जहाँ बहुत का भी अंत हो जाय, बड़ी का भी अंत हो जाय ऐसी स्थिति है यह। तो वह स्थिति जो एक आदमी पा सकता है, उसे सभी पा सकते हैं, केवल उधर की भूख हो। ❑

✻ जैसे किसी सेठ या बड़े साहब से मिलने जाने पर अच्छे कपड़े पहनकर जाना पड़ता है, वैसे ही बड़े-में-बड़ा जो परमात्मा है, उससे मिलने के लिए अंतःकरण इच्छा-वासना से रहित, निर्मल होना चाहिए।

✻ ईश्वर को पाने के लिए कोई मजदूरी नहीं करनी पड़ती, सिर्फ कला समझनी पड़ती है। मुक्ति के लिए कोई ज्यादा मेहनत नहीं है। नश्वर का सदुपयोग और शाश्वत में प्रीति - ये दो ही छोटे-से काम हैं।

(आश्रम से प्रकाशित पुस्तक 'अमृत के घूँट' से)

ज्ञानवर्धक पहेलियाँ

१. गुरुकृपा व शिष्य उत्कंठा से,
सम्भव होता वह योग।
घट भीतर अविनाशी प्रकटे,
फिर कभी न होता वियोग॥

२. पुत्र में ही गुरुबुद्धि करके, गुरुआज्ञा में तल्लीन।
देवहुति का इतिहास दोहराया, हुईं ब्रह्म में लीन॥

विश्वासो फलदायकः

बहुत समय पहले रायगढ़ नामक नगर में राजा दीनदयाल सिंह राज्य करते थे। उनके भतीजे का नाम था अंगदसिंह। वह वास्तव में बालिपुत्र अंगद की तरह वीर, निडर और भक्त युवक था।

एक बार किसी मुसलमान सूबेदार ने रायगढ़ पर चढ़ाई कर दी। दीनदयाल सिंह की सेना छोटी थी। वे घबरा गये और सोच में पड़ गये कि अब रक्षा हेतु क्या उपाय किया जाय ? उनकी घबराहट देखकर अंगदसिंह ने उनकी चिंता का कारण पूछा। दीनदयाल बोले : ''बेटा ! हमारे पास इतनी सेना नहीं है कि हम उनका मुकाबला कर सकें।''

अंगदसिंह ने कहा : ''चाचाजी ! युद्ध में विजय सेना के कम या ज्यादा होने से नहीं होती। इतिहास साक्षी है कई बार मुट्ठीभर वीरों ने दुश्मन की विशाल सेना को पीठ दिखाकर भागने पर मजबूर किया है। आप आज्ञा दें तो मैं सेना को लेकर युद्ध करने जाता हूँ और देखता हूँ कि दुश्मन कितना वीर है।''

''बेटा ! तेरा साहस बता रहा है कि विजय तेरी ही होगी। जा अंगद ! दुश्मन के दाँत खट्टे करके आ।'' दोनों सेनाओं में घमासान युद्ध हुआ। अंगदसिंह के शौर्य के आगे शत्रुओं के हौसले पस्त हो गये। अंगदसिंह और सूबेदार में बहुत देर तक युद्ध चलता रहा। अंत में सूबेदार का मस्तक जमीन पर लुढ़क गया। अंगदसिंह ने उसका मुकुट उतार लिया और जयघोष के साथ रायगढ़ वापस लौट आया।

सूबेदार के मुकुट में बहुमूल्य सुंदर रत्न जड़े हुए थे। अंगदसिंह ने उसमें से एक हीरा निकाल लिया और उसे भगवान जगन्नाथजी को चढ़ाने का संकल्प किया। शेष रत्नोंसहित मुकुट राजा को भेंट कर दिया। ईर्ष्यावश किसीने राजा के कान भर दिये कि सबसे कीमती हीरा तो अंगदसिंह ने निकाल लिया है। राजा ने अंगदसिंह को बुलाकर हीरा माँगा तो उसने राजा को सच्चाई बता दी कि ''मैंने इस हीरे को भगवान जगन्नाथजी के मंदिर में चढ़ाने का संकल्प किया है। ऐसे पवित्र संकल्प को त्याग देना बड़े पाप की बात होगी। अतः आप उस हीरे को पाने का आग्रह न करें।''

पर राजा दीनदयाल सिंह संसारी व्यक्ति थे। धर्म-कर्म में उनको विश्वास नहीं था और भगवान की पूजा वे केवल लोगों को दिखाने के लिए करते थे। ऐसे बहुमूल्य हीरे को मंदिर में चढ़ाने की बात उनको अच्छी नहीं लगी। वे अंगदसिंह पर हीरा देने के लिए दबाव डालने लगे लेकिन अंगदसिंह ने स्पष्ट इनकार कर दिया।

राजा ने देखा कि इस पराक्रमी और साहसी युवक से झगड़ा करके हीरा लेना सम्भव नहीं है। उन्होंने लालच और धमकी देकर अंगदसिंह के रसोइये को अपने साथ मिला लिया और एक दिन अंगदसिंह के भोजन में विष मिलवा दिया। अंगदसिंह ने अपने नियमानुसार भगवान को भोग लगाया। रसोइये को अपनी करनी पर पछतावा होने लगा। विश्वासघात का खयाल करके उसके हृदय में तीव्र अग्नि जलने लगी। जैसे ही अंगदसिंह ने पहला ग्रास मुँह में डालने को उठाया कि उसने अंगदसिंह का हाथ रोककर सारी बात बता दी। अंगदसिंह बोला : ''अब तो मैं भगवान को इस भोजन का भोग लगा चुका हूँ। अतः इस प्रसादरूप भोजन का मैं त्याग नहीं कर सकता।''

अंगदसिंह ने पूरा भोजन खत्म कर दिया। उसके अटल विश्वास का ऐसा परिणाम निकला

कि विष का उस पर कोई प्रभाव न पड़ा । पर राजा का दुष्ट व्यवहार, कपटनीति और स्वार्थबुद्धि देखकर अंगदसिंह को बड़ा खेद हुआ । उसने निश्चय किया कि 'अब मैं यहाँ नहीं रहूँगा । सबसे पहले जगन्नाथपुरी जाकर हीरा भगवान को चढ़ा दूँगा ।' वह महल से निकल पड़ा । यह समाचार राजा तक पहुँचा । उसने सौ सिपाहियों को भेजा कि ''कैसे भी अंगदसिंह से वह हीरा छीनकर लाओ ।'' अंगदसिंह रायगढ़ से पाँच-सात मील दूर एक तालाब के किनारे शांत भाव से भगवान की पूजा कर रहा था। सिपाहियों ने उसे घेर लिया और कहा : ''हमें हीरा दे दीजिये, नहीं तो हम आपको मारकर उसे ले जायेंगे।''

अंगदसिंह सोचने लगा, 'अब क्या करूँ ? मैं तो निःशस्त्र हूँ और सिपाहियों से घिरा हूँ।' उसने आँखें मूँद लीं, तन-मन-बुद्धि के प्रयासों को विराम दे दिया और अंतर्यामी की शरण हो गया : 'शस्त्र नहीं तो क्या, शस्त्र चलाने की सत्ता जिससे आती है वह परम समर्थ सत्ता तो मेरे साथ है । अब वही मेरा संकल्प पूरा करे । महान असमंजस की इन घड़ियों में वही अंतर्यामी मुझे मार्ग दिखाये ।'

सिपाहियों ने देखा कि कुछ ही क्षणों में अंगदसिंह के मुख पर एक स्वर्णिम आभा देदीप्यमान होने लगी। अंगदसिंह ने धीरे से आँखें खोलीं और **'एतत् ईश्वरार्पणमस्तु...'** कहकर हीरे को गहरे तालाब में फेंक दिया । सिपाही यह देखकर अवाक् रह गये और अब हीरे को पाने का कोई उपाय न देखकर वापस लौट गये । लोभ में अंधा राजा बहुत-से सिपाहियों को लेकर उस तालाब पर जा पहुँचा । तालाब में से हीरे को निकालने के उसने बहुत-से उपाय किये पर वह हीरा उसके हाथ न आया ।

अंगदसिंह चलते-चलते कई दिनों के बाद **जगन्नाथजी के मंदिर पहुँचा तो भगवान के गले के रत्नहार में वही हीरा चमक रहा था । भगवान की सर्वसमर्थता, परम सुहृदता देख उसकी आँखों से प्रेमाश्रुओं की सरिताएँ बह चलीं और वह भगवान को बारम्बार प्रणाम करने लगा ।** जब वह कुछ बोलने का सामर्थ्य जुटा पाया तो उसने कहा : ''हे परम प्रेरक ! हे सर्वसमर्थ ! हे सर्वरक्षक ! आपने कदम-कदम पर मेरी रक्षा की । पहले जहर से और फिर युक्ति देकर सैनिकों से बचाया । संसार की असलियत दिखाकर वैराग्य दिलाया और मुझे अपने पास बुलाया । मेरे द्वारा मन-ही-मन किये गये संकल्प को इस अद्भुत ढंग से पूरा कर मेरी लाज बचायी । अब मैं सर्व प्राणियों के परम सुहृद आपके अलावा कहीं मन न लगाकर आपको ही रिझाऊँगा, आपको ही पाऊँगा ।''

अंगदसिंह ने अपना शेष जीवन भगवद्भक्ति एवं भगवत्शरणागति में लगाकर कृतकृत्य किया। □

पुण्यदायी तिथियाँ

१५ अक्टूबर : सोमवती अमावस्या (सूर्योदय से शाम ५-३४ तक), सर्वपित्री अमावस्या

१६ से २३ अक्टूबर : शारदीय नवरात्र

१७ अक्टूबर : पूज्य बापूजी का ४८वाँ आत्मसाक्षात्कार दिवस

२१ अक्टूबर : रविवारी सप्तमी (सूर्योदय से रात्रि ९-४८ तक)

२४ अक्टूबर : विजयादशमी (वर्ष के साढ़े तीन शुभ मुहूर्तों में से एक), दशहरा

२९ अक्टूबर : शरद पूर्णिमा, कार्तिक स्नानारम्भ

७ नवम्बर : बुधवारी अष्टमी (सूर्योदय से शाम ६-२३ तक)

१० नवम्बर : ब्रह्मलीन मातुश्री माँ महँगीबा महानिर्वाण दिवस

११ नवम्बर : धनतेरस, धन्वंतरि जयंती

१२ नवम्बर : नरक चतुर्दशी, काली चौदस (गुज.)

१३ नवम्बर : नरक चतुर्दशी का तैलाभ्यंग स्नान, दीपावली

१४ नवम्बर : वि.सं. २०६९ नूतन वर्षारम्भ (गुज.-महा.), बलि प्रतिपदा (वर्ष के साढ़े तीन शुभ मुहूर्तों में से आधा)

१५ नवम्बर : भाईदूज

प्रश्न : गुरुदेव ! दस इन्द्रियों, मन, बुद्धि और अहंकार से जो रहित है उसको कैसे प्राप्त करें ?

पूज्य बापूजी : वैराग्य से। विवेक करो कि यह क्या रहेगा और कब तक रहेगा ? यह सब बदल जायेगा। दुःख आये तो दुःखी मत होओ, यह बदल जायेगा। सुख आये तो सुखी मत होओ, यह भी बदल जायेगा। सुख आता है तो चला जायेगा, दुःख देगा और दुःख आता है तो चला जायेगा, सुख देगा। तो एक बार सुख दुःख देता है, एक बार दुःख सुख देता है। अगर हम इनसे चिपकते हैं तो ये दोनों हमारा समय खराब करते हैं। अगर हम चिपकें नहीं, सुख आये तो बाँटने लग जायें और दुःख आये तो धैर्य और विवेक जगायें तो दोनों हमारे सेवक हो जायेंगे, हम सुख-दुःख से पार भगवान की भक्ति और ज्ञान में जगमगाने लगेंगे।

प्रश्न : ऐश्वर्य किसको कहते हैं ?

पूज्य बापूजी : अणिमा, गरिमा, लघिमा आदि सिद्धियाँ भी ऐश्वर्य है। रुपये-पैसे, धन-सम्पदा भी ऐश्वर्य है, यह बाह्य ऐश्वर्य है, नश्वर ऐश्वर्य है। सच्चा ऐश्वर्य तो यह है कि 'श्वास अंदर आता है तो 'ॐ' (मानसिक जप), बाहर आता है तो एक। अंदर आता है तो 'ॐ', बाहर आता है तो दो। अंदर आता है तो 'आनंद', बाहर आता है तो गिनती...' ऐसा करते-करते आत्मवैभव को, आत्मऐश्वर्य को पायें तो उसके आगे इन्द्र भी घुटने टेकता है, वही असली ऐश्वर्य है। नहीं तो सोने की लंकावाला रावण भी ऐश्वर्यवान नहीं है। शबरी भीलन ने ऐश्वर्य पाया था क्योंकि उसके पास गुरु का ज्ञान था। मीरा ने ऐश्वर्य पाया था, संत रैदास गुरु का ज्ञान मीरा ने पचाया था। सच्चा ऐश्वर्य है आत्मसंतोष। बिना शराब के नींद आ जाय, बिना सुविधाओं के भी आनंदित रहें, बिना वाहवाही के भी मस्त रहें। निंदनीय काम न करें फिर भी निंदा होती है तो चलो, पाप कट रहे हैं ऐसा सोचकर मौज में रहें - यह ऐश्वर्य है।

सुख सपना दुःख बुलबुला, दोनों हैं मेहमान।
दोनों बीतन दीजिये, साक्षी प्रभु को पहचान॥

यह असली ऐश्वर्य है। रावण का ऐश्वर्य, कुबेर का ऐश्वर्य, इन्द्र का ऐश्वर्य मायावी ऐश्वर्य है, नश्वर ऐश्वर्य है लेकिन भक्त और ब्रह्मज्ञानी संत का ऐश्वर्य है कि उनकी नूरानी निगाहों से नूरानी नूर बरसता है। ब्रह्मज्ञानी के ऐश्वर्य से हजारों-लाखों लोगों का भला हो जाता है। वे एक पल में न जाने कितने उजड़े दिलों को सँवार देते हैं, ऐसा ब्रह्मज्ञानियों के पास ऐश्वर्य होता है और उनके भक्तों के पास भी भगवद्-ऐश्वर्य होता है। अमीरों का ऐश्वर्य तो सतानेवाला होता है। ब्रह्मज्ञान जिन भी महापुरुषों को है, उनकी नजरों में ईश्वरीय ऐश्वर्य, ईश्वरीय शांति, ईश्वरीय प्रेम और ईश्वरीय रस होता है। ऐसे संतों को देखकर लोग बोलते हैं :

गुरुजी ! तुम तसल्ली न दो,
सिर्फ बैठे ही रहो।
महफिल का रंग बदल जायेगा,
गिरता हुआ दिल भी सँभल जायेगा॥

ऐसे ब्रह्मज्ञानी की दृष्टि अमृतवर्षी होती है। यह असली ऐश्वर्य है। ❑

गुरुजी का ऊँचा दृष्टिकोण

(ब्रह्मनिष्ठ पूज्य बापूजी का सत्संग-प्रसाद)

बंगाल के एक प्रसिद्ध राजनेता थे अश्विनी कुमार दत्त। वे इतने ईमानदार थे कि चहुँओर उनकी ख्याति थी। वे बड़े धर्मपरायण व्यक्ति थे। उनके गुरु थे राजनारायण बसु। एक बार राजनारायण बसु को लकवा मार गया। जब अश्विनी कुमार को इस बात का पता चला तो वे सोचने लगे कि 'गुरुजी तीन महीने से बिस्तर पर पड़े हैं और मुझे अभी तक पता नहीं चला !' वे बड़े दुःखी होकर भागते-भागते अपने गुरु का समाचार पूछने गये। गुरु को प्रणाम करने गये तो गुरु का एक हाथ तो लकवे से निकम्मा हो चुका था, दूसरे हाथ से पकड़कर उठाया और प्रेम से थप्पी लगाते हुए बोले : ''बेटा ! कैसे भागे-भागे आये हो ! देखो, भागा तो शरीर और दुःख हुआ मन में लेकिन उन दोनों को तुम जाननेवाले हो।'' ऐसा करके गुरुजी ने सत्यस्वरूप ईश्वर, आत्मा की सार बातें बतायीं।

वे तो दुःखी, चिंतित होकर आये थे पर सत्संग सुनते-सुनते उनकी दुःख-चिंता गायब हो गयी और बोले : ''गुरुजी ! मैं तो मायूस होकर आपका स्वास्थ्य देखने के लिए आया था लेकिन आपसे मिलने के बाद मेरी मायूसी चली गयी। आपको लकवा मार गया लेकिन आपको उसकी पीड़ा नहीं, दुःख नहीं ! हम तो बहुत दुःखी थे। आपने सत्संग-अमृत का पान कराया, तीन घंटे बीत गये और मुझे पता भी नहीं चला।''

गुरुजी ने अश्विनी कुमार को थपथपाया, बोले : ''पगले ! पीड़ा हुई है तो शरीर को हुई है, लकवा मारा है तो एक हाथ को मारा है, दूसरा तो ठीक है, पैर भी ठीक हैं, जिह्वा भी ठीक है... यह उसकी (भगवान की) कितनी कृपा है ! पूरे शरीर को भी तो लकवा हो सकता था, हृदयाघात हो सकता था। ६० साल तक शरीर स्वस्थ रहा, अभी थोड़े दिन से ही तो लकवा है, यह उसकी कितनी कृपा है ! दुःख भेजकर वह हमें शरीर की आसक्ति मिटाने का संदेश देता है, सुख भेजकर हमें उदार बनने और परोपकार करने का संदेश देता है। हमको तो दुःख का आदर करना चाहिए, दुःख का उपकार मानना चाहिए।

बचपन में हम दुःखी होते थे क्योंकि माँ-बाप जबरदस्ती विद्यालय ले जाते थे लेकिन ऐसा कोई मनुष्य धरती पर नहीं, जिसका दुःख के बिना विकास हुआ हो। दुःख का तो खूब-खूब धन्यवाद करना चाहिए और यह दुःख दिखता दुःख है किंतु अंदर से सावधानी, सुख और विवेक जगानेवाला है। दुःख विवेक-वैराग्य जगाकर परमात्मा तक पहुँचने का सुंदर साधन है।

मुझे सत्संग करने की भागादौड़ी से आराम करना चाहिए था किंतु मैं नहीं कर पा रहा था, तुम लोग नहीं करने देते थे तो भगवान ने लकवा करके देखो आराम दे दिया। यह उसकी कितनी कृपा है ! भगवान और दुःख की बड़ी कृपा है। माँ-बाप की कृपा है अतः मृत्यु के पश्चात् माँ-बाप का श्राद्ध-तर्पण करते हैं लेकिन इस बेचारे दुःख का तो श्राद्ध भी नहीं करते, तर्पण भी नहीं करते। यह बेचारा आता है, मर जाता है, रहता नहीं है। अब यह दुःख भी मिट जायेगा अथवा शरीर के साथ चला जायेगा।''

अश्विनी देखता रह गया ! गुरु ने आगे कहा : ''बेटा ! यह तेरी-मेरी वार्ता जो सुनेगा-पढ़ेगा वह भी स्वस्थ हो जायेगा। बीमारी शरीर को होती है लाला ! दुःख मन में आता है, चिंता चित्त में आती है, तुम तो निर्लेप नारायण, अमर आत्मा हो।'' ☐
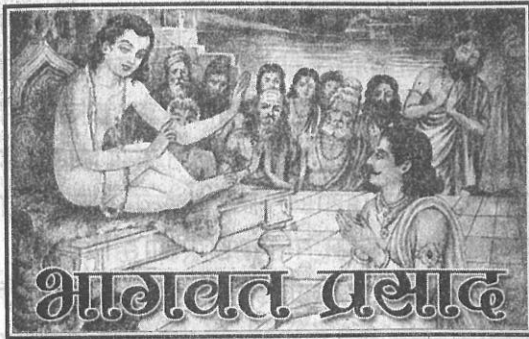
भगवद्भक्त राजा पृथु

(गतांक से आगे)

श्री सनत्कुमारजी ने पृथु से कहा : "राजन् ! परब्रह्म में सुदृढ़ प्रीति हो जाने पर पुरुष सद्गुरु की शरण लेता है, फिर ज्ञान और वैराग्य के प्रबल वेग के कारण वासनाशून्य हुए अपने अविद्या आदि पाँच प्रकार के क्लेशों से युक्त अहंकारात्मक सूक्ष्म शरीर - ५ कर्मेन्द्रियाँ, ५ ज्ञानेन्द्रियाँ, ५ प्राण तथा मन और बुद्धि (कुल १७) से युक्त को वह उसी प्रकार भस्म कर देता है जैसे अग्नि लकड़ी से प्रकट होकर फिर उसीको जला डालती है। इस प्रकार सूक्ष्म शरीर का नाश हो जाने पर वह उसके कर्तृत्वादि सभी गुणों से मुक्त हो जाता है। फिर तो जैसे स्वप्नावस्था में तरह-तरह के पदार्थ देखने पर भी उससे जगने पर उनमें से किसी चीज की सत्यता नहीं रहती, वैसे वह पुरुष शरीर के बाहर दिखाई देनेवाले घट-पटादि और भीतर अनुभव होनेवाले सुख-दुःखादि को भी नहीं देखता। इस स्थिति के प्राप्त होने से पहले ये पदार्थ ही जीवात्मा और परमात्मा के बीच में रहकर उनका भेद कर रहे थे।

जब तक अंतःकरण की उपाधि रहती है तभी तक पुरुष को जीवात्मा, इन्द्रियों के विषय और इन दोनों का संबंध करानेवाले अहंकार का अनुभव होता है, इसके बाद नहीं। बाह्य जगत में भी देखा जाता है कि जल, दर्पण आदि निमित्तों के रहने पर ही अपने बिम्ब और प्रतिबिम्ब का भेद दिखाई देता है, अन्य समय नहीं। जो लोग विषय-चिंतन में लगे रहते हैं, उनकी इन्द्रियाँ विषयों में फँस जाती हैं तथा मन को भी उन्हींकी ओर खींच ले जाती हैं। फिर तो जैसे जलाशय के तट पर उगे हुए कुशादि अपनी जड़ों से उसका जल आदि खींचते रहते हैं, उसी प्रकार वह इन्द्रियासक्त मन बुद्धि की विचारशक्ति को क्रमशः हर लेता है। विचारशक्ति के नष्ट हो जाने पर पूर्व-अपर की स्मृति जाती रहती है और स्मृति का नाश हो जाने पर ज्ञान नहीं रहता। इस ज्ञान के नाश को ही पंडितजन 'अपने-आप अपना नाश करना' कहते हैं। जिसके उद्देश्य से अन्य सब पदार्थों में प्रियता का बोध होता है, उस आत्मा का अपने द्वारा ही नाश होने से जो स्वार्थ-हानि होती है, उससे बढ़कर लोक में जीव की और कोई हानि नहीं है।

धन और इन्द्रियों के विषयों का चिंतन करना मनुष्य के सभी पुरुषार्थों का नाश करनेवाला है क्योंकि इनकी चिंता से वह ज्ञान और विज्ञान से भ्रष्ट होकर वृक्षादि स्थावर योनियों में जन्म पाता है। इसलिए जिसे अज्ञानांधकार से पार होने की इच्छा हो, उस पुरुष को विषयों में आसक्ति कभी नहीं करनी चाहिए क्योंकि यह धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष की प्राप्ति में बड़ी बाधक है। इन चार पुरुषार्थों में सबसे श्रेष्ठ मोक्ष ही माना जाता है क्योंकि अन्य तीन पुरुषार्थों में सर्वदा काल का भय लगा रहता है। प्रकृति में गुण-क्षोभ होने के बाद जितने भी उत्तम और अधम भाव-पदार्थ प्रकट हुए हैं, उनमें कुशल रह सके ऐसा कोई भी नहीं है। काल भगवान उन सभीके कुशलों को कुचलते रहते हैं।

अतः राजन् ! जो भगवान देह, इन्द्रिय, प्राण, बुद्धि और अहंकार से आवृत सभी स्थावर-जंगम प्राणियों के हृदयों में जीव के नियामक अंतर्यामी आत्मारूप से सर्वत्र साक्षात् प्रकाशित हो रहे हैं, उन्हें तुम 'वह मैं ही हूँ' ऐसा जानो।" (क्रमशः) □

दुर्गासप्तशती का आविर्भाव

(नवरात्रि : १६ से २३ अक्टूबर)

(पूज्य बापूजी के सत्संग-प्रसाद से)

मोह सकल ब्याधिन्ह कर मूला ।
तिन्ह ते पुनि उपजहिं बहु सूला ॥

'सब रोगों की जड़ मोह (अज्ञान) है। उन व्याधियों से फिर और बहुत-से शूल उत्पन्न होते हैं।' **(श्री रामचरित. उ.कां. : १२०.१५)**

जीव को जिन चीजों में मोह होता है, देर-सबेर वे चीजें ही जीव को रुलाती हैं। जिस कुटुम्ब में मोह होता है, जिन पुत्रों में मोह होता है, उनसे ही कभी-न-कभी धोखा मिलता है लेकिन अविद्या का प्रभाव इतना गहरा है कि जहाँ से धोखा मिलता है वहाँ से थोड़ा ऊब तो जाता है परंतु उससे छुटकारा नहीं पाता, वहीं चिपका रहता है।

समाधि नाम का एक वैश्य था। उसको भी धन-धान्य, कुटुम्ब में बहुत आसक्ति थी, बहुत मोह था। लेकिन उन्हीं कुटुम्बियों ने, पत्नी और पुत्र ने धन के लालच में उसे घर से बाहर निकाल दिया। वह इधर-उधर भटकते-भटकते जंगलों-झाड़ियों से गुजरते हुए मेधा ऋषि के आश्रम में पहुँचा।

ऋषि का आश्रम देखकर उसके चित्त को थोड़ी शांति मिली। अनुशासनबद्ध, संयमी और सादे रहन-सहनवाले, साधन-भजन करके आत्मशांति की प्राप्ति की ओर आगे बढ़े हुए, निश्चिंत जीवन जीनेवाले साधकों को देखकर समाधि वैश्य के मन में हुआ कि इस आश्रम में कुछ दिन तक रहूँगा तो मेरे चित्त की तपन जरूर मिट जायेगी।

सुख, शांति और चैन इन्सान की गहरी माँग है। अशांति कोई नहीं चाहता, दुःख कोई नहीं चाहता लेकिन मजे की बात यह है कि जहाँ से तपन पैदा होती है वहाँ से इन्सान सुख चाहता है और जहाँ से अशांति मिलती है वहाँ से शांति चाहता है, मोह की महिमा ही ऐसी है।

यह मोह जब तक ज्ञान के द्वारा निवृत्त नहीं होता है, तब तक कंधे बदलता है, एक कंधे का बोझ दूसरे कंधे पर धर देता है। ऐसे कंधे बदलते-बदलते जीवन बदल जाता है। अरे ! मौत भी बदल जाती है। कभी पशु का जीवन तो कभी पक्षी का। कभी कैसी मौत आती है तो कभी कैसी। अगर जीवन और मौत के बदलने से पहले अपनी समझ बदल लें तो बेड़ा पार हो जाय। समाधि वैश्य का कोई सौभाग्य होगा, कुछ पुण्य होंगे, ईश्वर की विशेष कृपा होगी, वह मेधा ऋषि के आश्रम में रहने लगा।

उसी आश्रम में राजा सुरथ भी आ पहुँचा। राजा सुरथ को भी राजगद्दी का अधिकारी बनने से रोकने के लिए मंत्रियों ने सताया था और धोखा दिया था। उनके कपटी व्यवहार से उद्विग्न होकर शिकार के बहाने वह राज्य से भाग निकला था। उसे संदेह हो गया था कि किसी-न-किसी षड्यंत्र में फँसाकर वे मुझे मार डालेंगे। अतः उसकी अपेक्षा राज्य का लालच छोड़ देना अच्छा है।

इस तरह समाधि वैश्य और राजा सुरथ दोनों ऋषि के आश्रम में रहने लगे। दोनों एक ही प्रकार के दुःख से पीड़ित थे। वे आश्रम में तो रहते थे लेकिन मोह नष्ट करने के लिए नहीं आये थे, ईश्वरप्राप्ति के लिए नहीं आये थे। अपने कुटुम्बियों ने, करीबी लोगों ने धोखा दिया था, संसार से जो ताप मिला था उसकी तपन बुझाने आये थे। उनके मन में आसक्ति और भोगवासना तो थी ही, इसलिए सोच रहे थे कि तपन मिट जाय फिर चले जायेंगे।

ऋषि आत्मज्ञानी थे, उनके शिष्य भी

सेवाभावी थे परंतु समाधि वैश्य और राजा सुरथ की हालत तो कुछ और थी। उन दोनों ने वार्तालाप शुरू किया। राजा सुरथ ने मेधा ऋषि के चरणों में प्रार्थना की : ''स्वामीजी ! हम आश्रम में रह तो रहे हैं लेकिन हमारा मन वही सांसारिक सुख चाहता है। हम समझते हैं कि संसार स्वार्थ से भरा हुआ है। कितने ही लोग मरकर सब कुछ इधर छोड़कर चले गये हैं। धोखेबाज सगे-संबंधियों ने तो हमसे जीते-जी सब छुड़ा दिया है। फिर भी ऐसी इच्छा होती रहती है कि स्वामीजी आज्ञा दें तो हम उधर जायें और आशीर्वाद भी दें कि हमारी पत्नी और बच्चे हमें स्नेह करें, धन-धान्य बढ़ता रहे और हम मजे से जियें।''

ऋषि उनके अंतःकरण की सच्चाई देखकर बहुत प्रसन्न हुए। उन्होंने कहा : ''इसीका नाम माया है। इसी **माया की दो शक्तियाँ हैं : आवरण शक्ति और विक्षेप शक्ति।** 'चाहे सौ-सौ जूते खायें तमाशा घुसकर देखेंगे।' तमाशा क्या देखते हैं ? जूते खा रहे हैं... धक्का-मुक्की सह रहे हैं... हुईशो... हुईशो चल रहा है। कहेंगे बहुत मजा है इस जीवन में। लेकिन ऐसा मजा लेने में जीवन पूरा कर देनेवाला जीवन के अंत में देखता है कि संसार में कोई सार नहीं है। ऐसा करते-करते सब चले गये। दादा-परदादा चले गये और हम-तुम भी चले जायेंगे। हम इस संसार से चले जायें उसके पहले इस संसार की असारता को समझकर एकमात्र सारस्वरूप परमात्मा में जाग जायें तो कितना अच्छा !''

सुरथ राजा ने कहा : ''स्वामीजी ! यह सब हम समझते हैं फिर भी हमारे चित्त में ईश्वर के प्रति प्रीति नहीं होती और संसार से वैराग्य नहीं आता। इसका क्या कारण होगा ? संसार की नश्वरता और आत्मा की शाश्वतता के बारे में सुनते हैं लेकिन नश्वर संसार का मोह नहीं छूटता और शाश्वत परमात्मा में मन नहीं लगता है। ऐसा क्यों ?''

मेधा ऋषि ने कहा : ''इसीको सनातन धर्म के ऋषियों ने 'माया' कहा है। वह जीव को संसार में घसीटती रहती है। ईश्वर सत्य है, परब्रह्म परमात्मा सत्य है परंतु माया के कारण असत् संसार, नाशवान जगत सच्चा लगता है। इस माया से बचना चाहिए। माया से बचने के लिए ब्रह्मविद्या का आश्रय लेना चाहिए। वही संसार-सागर से पार करानेवाली विद्या है। इस ब्रह्मविद्या की आराधना-उपासना से बुद्धि का विकास होगा और आसुरी भाव काम, क्रोध, लोभ, मोहादि विकार मिटते जायेंगे। ज्यों-ज्यों विकार मिटते जायेंगे त्यों-त्यों दैवी स्वभाव प्रकट होने लगेगा और उस अंतर्यामी परमात्मा में प्रीति होने लगेगी। नश्वर का मोह छूटता जायेगा और उस परम देव को जानने की योग्यता बढ़ती जायेगी।''

फिर उन कृपालु ऋषिवर ने दोनों के पूछने पर उन्हें भगवती की पूजा-उपासना की विधि बतायी। ऋषिवर ने उस महामाया की आराधना करने के लिए जो उपदेश दिया, वही शाक्तों का उपास्य ग्रंथ 'दुर्गासप्तशती' के रूप में प्रकट हुआ। तीन वर्ष तक आराधना करने पर भगवती साक्षात् उनके समक्ष प्रकट हुई और वर माँगने के लिए कहा।

राजा सुरथ के मन में संसार की वासना थी अतः उन्होंने संसारी भोग ही माँगे किंतु समाधि वैश्य के मन में किसी सांसारिक वस्तु की कामना नहीं रह गयी थी। संसार की दुःखरूपता, अनित्यता और असत्यता उनकी समझ में आ चुकी थी अतः उन्होंने भगवती से प्रार्थना की : ''देवी ! अब ऐसा वर दो कि 'यह मैं हूँ' और 'यह मेरा है'- इस प्रकार की अहंता-ममता और आसक्ति को जन्म देनेवाला अज्ञान नष्ट हो जाय और मुझे विशुद्ध ज्ञान की उपलब्धि हो।''

भगवती ने बड़ी प्रसन्नता से समाधि वैश्य को ज्ञान-दान किया और वे स्वरूप-अवस्थित होकर परमात्मा को प्राप्त हो गये। ❑

मेरे स्वास्थ्य की कुंजी आप भी ले लो

– पूज्य बापूजी

(विश्वात्मा पूज्य संत श्री आशारामजी बापू केवल भारत ही नहीं अपितु समस्त विश्व के कल्याण में रत रहते हैं। एक-एक दिन में सैकड़ों-हजारों किलोमीटर देशाटन करके लोक-कल्याणार्थ वर्षभर में २०० से अधिक विभिन्न स्थानों में सत्संग-कार्यक्रम सफलतापूर्वक करना एक विलक्षण आध्यात्मिक विश्व-कीर्तिमान ही है। व्यक्ति एक राज्य से दूसरे राज्य में लम्बा सफर तय करके आता है तो थका-माँदा दिखने लगता है अथवा हवामान बदलने के कारण कभी बीमार भी हो जाता है। परंतु पूज्य बापूजी ७२ वर्ष की आयु में भी ब्रह्मज्ञान के सत्संगवश एक ही दिन में ३-३ राज्यों के ४ से ५ स्थानों तक की यात्रा कर लेते हैं फिर भी स्वस्थ, तंदुरुस्त रहते हैं और हँसते-मुस्कराते हुए, लोगों के कष्ट, पीड़ा, दुःख, बीमारी दूर करते हैं। ऐसे औलिया बापूजी की स्वस्थता का राज क्या है ? इसे जानने की सभीको उत्सुकता रहती है। पूज्य बापूजी का जीवन तो एक खुली किताब है। आपश्री को जिससे भी लाभ होता है, उसे सबके सामने सत्संग में बता ही देते हैं। पूज्य बापूजी अपने स्वास्थ्य की कुंजियाँ खुद ही बता रहे हैं :)

''मेरे पास स्वस्थ रहने की कुंजी है। मैं आपको वह कुंजी बता देता हूँ। प्रतिदिन हम लगभग एक किलो भोजन करते हैं, दो किलो पानी पीते हैं और २१,६०० श्वास लेते हैं। ९,६०० लीटर हवा लेते और छोड़ते हैं, उसमें से हम १० किलो खुराक की शक्ति हासिल करते हैं। एक किलो भोजन से जो मिलता है उससे १० गुना ज्यादा हम श्वासोच्छ्वास से लेते हैं। ये बातें मैंने शास्त्रों से सुनीं।

मैं क्या करता हूँ, गाय के गोबर और चंदन से बनी गौ-चंदन धूपबत्ती जलाता हूँ, फिर उसमें एरंड या नारियल का तेल अथवा देशी गाय के शुद्ध घी की बूँदें डालता रहता हूँ और कमरा बंद करके अपना नियम भी करता रहता हूँ। पहने हुए कपड़े उतारकर बस एक कच्छा पहनता हूँ और बाकी सब कपड़े हटा देता हूँ। मैं आसन-प्राणायाम करता हूँ तो रोमकूपों और श्वास के द्वारा धूपबत्ती से उत्पन्न शक्तिशाली प्राणवायु लेता हूँ। श्वास रोककर ११ दंड-बैठक करता हूँ, इससे मेरे को हृदयाघात (हार्ट-अटैक) नहीं होगा, उच्च या निम्न रक्तचाप नहीं होगा। श्वास रोककर ११ दंड-बैठक करने से पूरे शरीर की नस-नाड़ियों की बिल्कुल घुटाई-सफाई हो जाती है। फिर वज्रासन में बैठकर श्वास बाहर रोक देता हूँ और करीब २० बार पेट को अंदर नाभि की ओर खींचता हूँ (अग्निसार क्रिया)। इसके बाद पाँच मिनट सर्वांगासन करता हूँ। फिर ५-६ मिनट पादपश्चिमोत्तानासन करता हूँ। उसके बाद सूर्य की किरणें मिलें इस प्रकार धूप में घूमता हूँ।

कभी-कभी अगर दिन को देर से खाया है या पेट थोड़ा भारी है अथवा यात्रा बहुत की है और थकान है तो रात को कुछ खाये बिना ही जल्दी सो जाता हूँ तो जो खाने-पीने की गड़बड़ी है अथवा थकान है, वह सब उपवास से ठीक हो जाती है। उपवास रखने से जीवनीशक्ति रोग और थकान को ठीक कर देती है।

लंघनं परं औषधम्।

मैं यह इसलिए बता रहा हूँ कि तुम भी उपवास का फायदा ले लो। फिर कभी शरीर ढीला-ढाला होता है तो सुबह ग्वारपाठे का रस पी लेता हूँ और कभी देखता हूँ ग्वारपाठे के रस की अपेक्षा १ गिलास गुनगुने पानी में २५ तुलसी के पत्तों का रस और १ नींबू ठीक रहेगा तो वह पी लेता हूँ। ऐसा करके पेट को और मस्तक को टनाटन रखता हूँ तो बाकी सब टनाटन हो जाता है। ग्वारपाठे से २२० से भी अधिक रोग मिटते हैं।

सूर्य की किरणों में प्राणायाम करो - लम्बे श्वास लो और रोको, स्थलबस्ती करो तो १३२ प्रकार की बीमारियाँ ऐसे ही मिटती हैं। लोग ताकत के लिए खूब बादाम खाते हैं लेकिन बेवकूफी है। बादाम, काजू या पिस्ता आदि अधिक नहीं खाने चाहिए। भिगोकर खाने से वे सुपाच्य बनते हैं और एक बादाम चबा-चबाकर उसे प्रवाही बनाकर पी लो तो १० बादाम खाने की ताकत आती है। मैं महीने में १५-२० दिन एक बादाम तो चबा के ले ही लेता हूँ। पेशाब रुककर आना, ज्यादा आना अथवा रोक न पाना - ये तकलीफें बड़ी उम्र में होती हैं लेकिन इस प्रकार से एक बादाम चबानेवाले को नहीं होंगी। बड़ी उम्र में व्यक्ति को बहरापन हो जाता है। तो सिर में जो तेल डालते हैं वही तेल मैं कान में दो-दो बूँद, चार-चार बूँद डालता रहता हूँ। फिर लेटकर गाय के घी का नस्य लेता हूँ, जिससे दिमाग मस्त रहता है, सिरदर्द आदि की तकलीफें नहीं हो सकतीं, ज्ञानतंतु भी हृष्ट-पुष्ट रहते हैं, जवानी बरकरार रहती है।

यह सब इसलिए बता रहा हूँ क्योंकि जो बड़े-बड़े अधिकारी हैं, वे लोग मेरे शिष्यों से पूछते हैं कि आपके बापूजी क्या खाते हैं ?

अरे, लाला-लालियो ! खाने से सब कुछ नहीं होता। समझने से सब कुछ होता है। कितनी ही भारी चीज खाओ, उससे आपकी तबीयत बढ़िया होगी ऐसी बात नहीं है। पहले खाया हुआ पच जाय फिर दूसरा खाओ। खाने पर खाया तो सत्यानाश होगा। उस समय तो खा लेते हैं, बाद में शरीर भारी रहता है। ऐसी गलती तो कभी-कभी मैं भी करता हूँ। तो फिर मैं उपवास कर लेता हूँ और सुबह आसन-वासन करता हूँ ताकि पहले का खाया हुआ बिल्कुल पच जाय।

रात को देर से नहीं खाना चाहिए। मैं रात को भोजन नहीं करता हूँ। कभी ६ महीने में एकाध बार खाना खाया होगा, नहीं तो नहीं। रात को सुपाच्य खाना चाहिए। दूध बड़ा सुपाच्य है। रात को दूध ही लेता हूँ लेकिन ९ बजे के बाद लेता हूँ तो थोड़ा कम कर देता हूँ। ज्यों सूर्य अस्त होता है, त्यों हमारी जठराग्नि मंद होती जाती है। स्वस्थ रहना है तो सूर्यास्त के पहले रात्रि का भोजन कर लेना चाहिए। नहीं कर पाओ तो ७-८ बजे तक कर लेना चाहिए लेकिन ज्यों देर होती है त्यों भोजन सादा-हलका लो।

गर्मियों में पाचन कमजोर रहता है। उन दिनों में दालें, राजमा खानेवाला पक्का बीमार मिलेगा। गर्मी में मूँग की छिलकेवाली दाल, वह भी १०० ग्राम दाल तो १ किलो पानी हो, उबाल-उबालकर ११०० ग्राम में से १ किलो दाल बचे तो वह सुपाच्य है। बाकी तो मोटी दाल से शरीर भारी रहेगा।

कुछ समय अपने अंतरात्मा में शांत बैठा करो। दो मिनट भी निःसंकल्प बैठते हो तो बड़ी शक्ति प्राप्त होती है। मैं रात्रि को सोते समय भी थोड़ा सत्संग सुनते-सुनते विश्राम में चला जाता हूँ, निःसंकल्प होता हूँ। सुबह उठता हूँ तब भी रात्रि की ध्यानावस्था में शांत रहता हूँ। इससे मेरा आध्यात्मिक खजाना भी भरपूर रहता है और शरीर भी स्वस्थ रहता है। मेरे को छुपाने की आदत नहीं है, खुली किताब है। इन कुंजियों को अपनाकर आप भी शरीर स्वस्थ रखो और अपने मन-बुद्धि को परमात्मा में लगाकर इसी जन्म में निहाल-खुशहाल हो जाओ।'' ❐

श्रीरामचन्द्रजी का वैराग्य

(आत्मनिष्ठ पूज्य बापूजी के सत्संग-प्रसाद से)

लगभग १६ वर्ष की वय में दशरथनंदन राजकुमार श्रीरामचन्द्रजी अपने पिता से आज्ञा लेकर तीर्थयात्रा करने निकले और सभी तीर्थों के दर्शन एवं दान, तप, ध्यान आदि करते हुए एक वर्ष बाद पुनः अयोध्या लौटे। तब एकांत में श्रीरामजी विचार करते हैं, 'जितने भी बड़े-बड़े राजा, महाराजा, धनाढ्य और श्रीमंत थे, उनके अवशेषों को गंगा में प्रवाहित कर लोग आँसू गिरा के चले जाते हैं। इस प्रकार इस जगत की वस्तुओं में खेलनेवाले जीवों के सारे अवशेष भी गंगा नदी में बह जाते हैं।'

श्रीरामचन्द्रजी विवेक-वैराग्य के उपरोक्त विचारों में निमग्न थे, तभी विश्वामित्र मुनि श्रीराम और लक्ष्मण को अपने साथ ले जाने के लिए राजा दशरथ के यहाँ आये। दशरथ की नजरें जैसे ही विश्वामित्र पर पड़ीं, उन्होंने सिंहासन से उतरकर दंडवत् प्रणाम करके महर्षि विश्वामित्र का आदरपूर्वक सत्कार किया तथा उनके आगमन का कारण पूछा। तब विश्वामित्रजी ने दशरथ से अपने यज्ञ की रक्षार्थ राम और लक्ष्मण को अपने साथ भेजने को कहा। महर्षि विश्वामित्र के वचन सुनकर दशरथजी मूर्च्छित जैसे होने लगे। तब वसिष्ठजी ने उनसे कहा :

''राजन् ! आप चिंता न करें। विश्वामित्रजी सुयोग्य एवं सामर्थ्यवान हैं। ये परम तपस्वी हैं। इनसे बड़ा वीर पुरुष तो देवताओं में भी नहीं है। आप निर्भय होकर राम-लक्ष्मण को विश्वामित्रजी के साथ भेज दीजिये।''

महर्षि वसिष्ठ के वचन सुनकर राजा दशरथ सहमत हो गये। उन्होंने रामजी को बुलाने के लिए सेवक भेजा। लौटकर सेवक कहता है : ''रामचन्द्रजी तो एकांत कक्ष में बैठे हैं। हास्य-विनोद की वस्तुएँ देने पर वे कहते हैं : ये नश्वर वस्तुएँ लेकर मुझे क्या करना है ? जिस प्रकार एक मृग हरी-भरी घास के आकर्षण में बह जाता है और शिकारी उसे मार डालता है, उसी प्रकार तुम लोग भी इन भोग-पदार्थों में फँस जाते हो और असमय काल के गाल में समा जाते हो। ऐसे भोग-पदार्थों में मुझे समय नष्ट नहीं करना है अपितु मुझे आत्मतत्त्व का अनुसंधान करना है।''

तब समस्त साधुगण, ऋषि-मुनि और सभासद कहने लगे : ''सचमुच, कितने विवेकपूर्ण वचन हैं श्रीरामचन्द्रजी के !''

विश्वामित्रजी ने राजा दशरथ से कहा : ''हे राजन् ! यदि ऐसा है तो श्रीरामजी को हमारे पास लाओ, हम उनका दुःख निवृत्त करेंगे। हम और वसिष्ठादि एक युक्ति से उपदेश करेंगे, उससे उनको आत्मपद की प्राप्ति होगी।''

तत्पश्चात् रामचन्द्रजी सभा में बुलाये गये। उन्होंने जगत की नश्वरता का जो वर्णन किया वह 'श्री योगवासिष्ठ महारामायण' के 'वैराग्य प्रकरण' में वर्णित है।

दूसरा कोई ग्रंथ आप पूरा न पढ़ सकें तो योगवासिष्ठ का वैराग्य प्रकरण ही पढ़ लेना, ताकि पुनरावृत्ति किस तरह से होती है यह समझ में आ जायेगा। आपके हृदय के द्वार खुलने लगेंगे। यह विचार उदित होगा कि 'हम क्या कर रहे हैं ?'

योगवासिष्ठ में छः प्रकरण हैं - वैराग्य प्रकरण, मुमुक्षु प्रकरण, उत्पत्ति प्रकरण, स्थिति प्रकरण, उपशम प्रकरण और निर्वाण प्रकरण। इन प्रकरणों में आप जीवन्मुक्त स्थिति तक पहुँच

सको ऐसा सुंदर वर्णन है।

जो मनुष्य एक बार योगवासिष्ठ का पाठ करता है, उसका चित्त शांत होने लगता है। फिर चित्त किधर जाता है इसे देखा जाय तो तुम्हारे संकल्पों-विकल्पों में सहजता से कमी होने लगती है। तुम्हारी आध्यात्मिक शक्तियों का विकास होकर तुम्हारे ऐहिक, सांसारिक कार्य तो आसानी से होने लगेंगे ही, साथ ही जगत के कार्यों में जो सफलता मिलेगी उसका तुम्हें अहं न होगा और न ही उसमें आसक्ति होगी तथा न कभी वस्तुओं का चिंतन करते-करते मृत्यु ही होगी बल्कि तुम्हारे द्वारा अपने स्वरूप का चिंतन होते हुए मृत्यु देह की होगी और तुम देह की मृत्यु के द्रष्टा बनोगे।

सुकरात को जहर देने का आदेश दिया गया। जहर बनानेवाला जहर पीस रहा है लेकिन सुकरात निश्चिंत होकर अपने मित्रों के साथ बातचीत कर रहे हैं। ५ बजते ही जहर पीना है और सुकरात दो मिनट पहले ही जहर देनेवाले से कहते हैं : ''भाई ! समय पूरा हो गया है, तुम देर क्यों कर रहे हो ?'' तब वह बोला : ''आप भी अजीब इन्सान हैं ! मैं तो चाहता हूँ कि आप जैसे महापुरुष दो साँस और ले लें, इसलिए मैं जानबूझकर थोड़ी देर कर रहा हूँ।''

सुकरात कहते हैं : ''तुम जानबूझकर देर करते हो लेकिन दो मिनट अधिक मैंने जी भी लिया तो कौन-सी बड़ी बात हो जायेगी ? मैंने तो जीवन जीकर देख लिया, अब मृत्यु को देखना है। मैं मरनेवाला नहीं हूँ।''

जहर का प्याला आया... मित्र और साथी रोने लगे... तो वे महापुरुष समझाते हैं : ''अब रोने का समय नहीं, समझने का समय है। यह जहर शरीर पर प्रभाव करेगा किंतु मुझ पर इसका कुछ भी प्रभाव नहीं पड़ेगा।''

सुकरात पानी की तरह जहर पी गये। तत्पश्चात् वे लेटकर अपने शिष्यों से, भक्तों से कहते हैं : ''जहर का असर अब पैरों से शुरू हुआ है... अब जाँघों तक आ चुका है... अब कमर तक उसका असर आ रहा है... रक्तवाहिनियों ने काम करना बंद कर दिया है... अब हृदय तक आ पहुँचा है... अब मृत्यु यहाँ तक आ गयी है लेकिन मृत्यु इस शरीर को मारती है; मृत्यु जिसको मारती है उसे मैं ठीक तरह से देख रहा हूँ। जो मृत्यु को देखता है उसकी मृत्यु होती ही नहीं, यह पाठ पढ़ाने के लिए मैं तुम्हें सावधान कर रहा हूँ।''

इसी प्रकार अपने जीवन में भी एक दिन ऐसा आयेगा। मौत से घबराने की जरूरत नहीं है, डरने की जरूरत नहीं है। 'मौत किसकी होती है ? किस तरह होती है ?' उस समय सावधान होकर जो यह निहारता है, जो मृत्यु को देखता है, वह मौत से परे अमर आत्मा को जानकर मुक्त हो जाता है।

बिल्ली को देखकर दाने चुगता कबूतर आँखें बंद कर लेता है लेकिन ऐसा करने से बिल्ली छोड़ नहीं देती। ऐसे ही जो दुःख, विघ्न और मौत से लापरवाही बरतेगा उसे मौत छोड़ेगी नहीं। मौत का साक्षी होकर मौत से परे अपने अमर आत्मा में जो जाग जाता है, वह धन्य हो जाता है ! ❐

अमृतबिंदु

जो दुनिया की चीजें पाकर सुखी होना चाहता है, वह बड़ी भारी गलती करता है। दुनिया की चीजें पाकर सदुपयोग करो, सुख तो हृदय में है। दुनिया की चीजों का मजा लोगे तो रावण जैसा - जिसके पास सोने की लंका थी - वह भी दुःखी होकर मरा तो तुम्हारे पास क्या है ! जब तक भगवान में प्रीति लगानेवाला सत्संग नहीं मिलता, भगवान में प्रीति लगानेवाली भगवान के नाम की दीक्षा नहीं मिलती, तब तक चाहे सोने की लंका मिल जाय या सोने का हिरण्यपुर मिल जाय, दुःखों से जान नहीं छूटती। **- पूज्य बापूजी**

वीर्यरक्षा के प्रयोग

मंत्र-प्रयोग

'ॐ अर्यमायै नमः' - भगवान अर्यमा का यह मंत्र श्रद्धा से जपनेवाला विकारी वातावरण व विकारी लोगों के बीच से भी बचकर निकल सकता है । श्रद्धा से जपने पर बहुत लाभ होता है यह कइयों का अनुभव है । स्त्री-पुरुष जिनको भी कामविकार गिराता हो उन्हें इस महामंत्र का आदरपूर्वक जप करना चाहिए । रात्रि को सोने से पूर्व २१ बार इस मंत्र का जप करने से तथा तकिये पर अपनी माँ का नाम लिखने से (स्याही-पेन से नहीं, केवल उँगली से) व्यक्ति बुरे एवं विकारी सपनों से बच जाता है ।

वीर्यरक्षक चूर्ण

बहुत कम खर्च में आप यह चूर्ण बना सकते हो । कुछ सूखे आँवलों से बीज अलग करके उन आँवलों को कूटकर चूर्ण बना लो । यह संत श्री आशारामजी आश्रमों व आश्रम की समितियों में तैयार मिलता है । आँवला चूर्ण व पिसी मिश्री का समभाग मिश्रण बनाकर उसमें २० प्रतिशत हल्दी मिला दो । यह चूर्ण उनके लिए भी हितकर है जिन्हें स्वप्नदोष नहीं होता हो ।

रोज रात्रि को सोने से आधा घंटा पूर्व पानी के साथ एक चम्मच यह चूर्ण ले लिया करो । यह चूर्ण वीर्य को गाढ़ा करता है, कब्ज दूर करता है, वात-पित्त-कफ के दोष मिटाता है और संयम को मजबूत करता है ।

सावधानी : इसके सेवन से सवा दो घंटे पहले या बाद में दूध न पियें ।

गोंद का प्रयोग

६ ग्राम खैर का गोंद रात को पानी में भिगो दो व सुबह खाली पेट लो । प्रयोग के दौरान भूख कम लगती हो तो दोपहर को भोजन के पूर्व अदरक व नींबू का रस मिलाकर लो ।

तुलसी : एक अद्भुत औषधि

फ्रेंच डॉक्टर विक्टर रेसीन ने कहा है : ''तुलसी एक अद्भुत औषधि (Wonder drug) है । इस पर किये गये प्रयोगों ने यह सिद्ध कर दिया है कि रक्तचाप और पाचनतंत्र के नियमन में तथा मानसिक रोगों में तुलसी अत्यंत लाभकारी है । इससे रक्तकणों की वृद्धि होती है । मलेरिया तथा अन्य प्रकार के बुखारों में तुलसी अत्यंत उपयोगी सिद्ध हुई है ।''

तुलसी रोगों को तो दूर करती ही है, इसके अतिरिक्त ब्रह्मचर्य की रक्षा करने एवं यादशक्ति बढ़ाने में भी अनुपम सहायता करती है । तुलसीदल एक उत्कृष्ट रसायन है । यह त्रिदोषनाशक है । रक्तविकार, वायु, खाँसी, कृमि आदि की निवारक है तथा हृदय के लिए बहुत हितकारी है ।

तुलसी के बीज कूटकर रख लें । एक चुटकी (आधा व चौथाई ग्राम के बीच) रात को भिगो दें । सुबह खाली पेट पी लें । वात, पित्त, कफ - इन तीनों के असंतुलन से ही सारी बीमारियाँ होती हैं और तुलसी के बीज त्रिदोषशामक हैं । अतः त्रिदोषजनित तथा कैंसर आदि बीमारियाँ आपके पास नहीं फटकेंगी । इस प्रयोग से भूख अच्छी लगेगी और बहुत सारे स्वास्थ्य-लाभ होंगे । इस प्रयोग से वीर्यरक्षा का भी सीधा संबंध है । जितने दिन अनुकूल लगे उतने दिन यह प्रयोग कर सकते हैं ।

पादपश्चिमोत्तानासन

लाभ : इससे नाड़ियों की विशेष शुद्धि होकर

हमारी कार्यक्षमता बढ़ती है व बीमारियाँ दूर होती हैं। बदहजमी, कब्ज जैसे पेट के सभी रोग, सर्दी-जुकाम, कफ गिरना, कमरदर्द, हिचकी, सफेद कोढ़, पेशाब की बीमारियाँ, स्वप्नदोष, वीर्य-विकार, अपेंडिसाइटिस, सायटिका, नलों की सूजन, पीलिया, अनिद्रा, दमा, खट्टी डकारें, ज्ञानतंतुओं की कमजोरी, गर्भाशय के रोग, मासिकधर्म की अनियमितता व अन्य तकलीफें, नपुंसकता, रक्तविकार, ठिंगनापन व अन्य कई प्रकार की बीमारियाँ यह आसन करने से दूर होती हैं।

इस आसन से शरीर का कद लम्बा होता है। यदि शरीर में मोटापन है तो वह दूर होता है और यदि दुबलापन है तो वह दूर होकर शरीर सुडौल, तंदुरुस्त अवस्था में आ जाता है। ब्रह्मचर्य पालनेवालों के लिए यह आसन भगवान शिव का प्रसाद है। इसका प्रचार पहले शिवजी ने और बाद में जोगी गोरखनाथ ने किया था।

विधि : जमीन पर आसन बिछाकर दोनों पैर सीधे करके बैठ जाओ। फिर दोनों हाथों से पैरों के अँगूठे पकड़कर झुकते हुए ललाट को दोनों घुटनों से मिलाने का प्रयास करो। घुटने जमीन पर सीधे रहें। प्रारम्भ में घुटने जमीन पर न टिकें तो कोई हर्ज नहीं। सतत अभ्यास से यह आसन सिद्ध हो जायेगा। यह आसन करने के १५ मिनट बाद एक-दो कच्ची भिंडी खानी चाहिए। सेवफल का सेवन भी फायदा करता है।

प्रारम्भ में यह आसन आधा मिनट से शुरू करके प्रतिदिन थोड़ा समय बढ़ाते हुए १५ मिनट तक कर सकते हैं। पहले २-३ दिन तकलीफ होती है, फिर सरल हो जाता है।

(आश्रम से प्रकाशित पुस्तक 'दिव्य प्रेरणा-प्रकाश' से)

ढूँढ़ो तो जानें

नीचे अष्ट चिरंजीवियों से संबंधित तथ्य दिये जा रहे हैं। उनके आधार पर वर्ग-पहेली में से उनके नाम खोजिये।

(१) वामन अवतार द्वारा उद्धार हुआ
(२) वेदों के चार विभाग किये
(३) अष्टसिद्धि, नवनिधि के दाता
(४) रावण के राज्य में श्रीरामभक्त
(५) भगवान विष्णु का क्रोधावतार
(६) शिवभक्ति से मृत्यु को जीतनेवाले
(७) महाभारत में नारायणास्त्र चलानेवाला
(८) शरद्वान के पुत्र

म	मी	वि	मा	न	ज	बि	दि	ल	अ	र्थी	शू
वि	रि	क्रां	भी	प	रं	जी	स	व्या	द	वे	घ
र	श	दा	म	ष	र	सं	क्रां	ति	म्य	र्क	अ
गी	र्णि	अ	ङ्क	त्रि	ण	कु	दी	र	त्था	प	त
त्रि	पा	श	श्व	व	बं	कु	जी	प्ति	ष्ठ	जी	च्छि
र	श्व	व	पु	त्था	ध	न	हो	चा	प	म	चे
कृ	शि	बा	ष्ठ	रु	मा	वे	ण	गु	रो	रा	टी
ती	पा	ड	रु	नु	र्क	व	डा	क	जा	शु	चं
यं	नं	चा	ह	भ	ण्डे	के	मी	ब	रु	र	ड
ज	वा	ड़	र्य	डी	य	व	लि	पू	ल	प	ग
नु	वृ	र्थी	सी	जी	जी	ति	र्णि	त	लि	ह	घ
जी	त	ष	चं	र	र्ष	मा	शु	व्या	बु	प	र

अंक २३७ की पहेलियों के उत्तर

'ढूँढ़ो तो जानें' वर्ग-पहेली

(१) वराह (२) दत्तात्रेय (३) कच्छप (४) धन्वंतरि (५) मोहिनी (६) नृसिंह (७) वामन (८) श्रीराम (९) श्रीकृष्ण (१०) कपिल मुनि (११) परशुराम

ज्ञानवर्धक पहेलियाँ

(१) शशकासन (२) भगवान शिव (३) भक्त प्रह्लाद (४) निषादराज

पितरों की सद्गति करनेवाला व्रत

(इंदिरा एकादशी : ११ अक्टूबर)

धर्मराज युधिष्ठिर ने पूछा : ''हे मधुसूदन ! कृपा करके मुझे यह बताइये कि आश्विन के कृष्ण पक्ष में कौन-सी एकादशी होती है ?''

भगवान श्रीकृष्ण बोले : ''राजन् ! आश्विन (गुजरात-महाराष्ट्र के अनुसार भाद्रपद) के कृष्ण पक्ष में 'इंदिरा' नाम की एकादशी होती है । इस व्रत के प्रभाव से बड़े-बड़े पापों का नाश हो जाता है । नीच योनि में पड़े हुए पितरों को भी यह एकादशी सद्गति देनेवाली है ।

राजन् ! सत्ययुग में इन्द्रसेन नाम से विख्यात एक राजकुमार थे, जो माहिष्मतीपुरी के राजा होकर धर्मपूर्वक प्रजा का पालन करते थे । उनका यश सब ओर फैल चुका था ।

राजा इन्द्रसेन भगवान विष्णु की भक्ति में तत्पर हो गोविंद के मोक्षदायक नामों का जप करते हुए समय व्यतीत करते थे और विधिपूर्वक अध्यात्मतत्त्व के चिंतन में संलग्न रहते थे । एक दिन वे राजसभा में सुखपूर्वक बैठे हुए थे, इतने में देवर्षि नारद आकाश से उतरकर वहाँ आ पहुँचे । उन्हें आया देख राजा हाथ जोड़कर खड़े हुए और विधिपूर्वक पूजन करके उन्हें आसन पर बिठाया । फिर बोले : ''मुनिश्रेष्ठ ! आपकी कृपा से मेरा सर्वथा कुशल है । आज आपके दर्शन से मेरी सम्पूर्ण यज्ञ-क्रियाएँ सफल हो गयीं । देवर्षे ! अपने आगमन का कारण बताकर मुझ पर कृपा करें ।''

नारदजी ने कहा : ''नृपश्रेष्ठ ! सुनो, मेरी बात तुम्हें आश्चर्य में डालनेवाली है । मैं ब्रह्मलोक से यमलोक में गया था । वहाँ यमराज ने भक्तिपूर्वक मेरी पूजा की । सभा में मैंने तुम्हारे पिता को भी देखा था । वे व्रत-भंग के दोष से वहाँ आये थे । राजन् ! उन्होंने तुम्हारे लिए संदेशा भेजा है, उसे सुनो । उन्होंने कहा है : 'बेटा ! मुझे इंदिरा एकादशी के व्रत का पुण्य देकर स्वर्ग में भेजो ।' उनका यह संदेश लेकर मैं तुम्हारे पास आया हूँ । राजन् ! अपने पिता को स्वर्गलोक की प्राप्ति कराने के लिए 'इंदिरा एकादशी' का व्रत करो ।''

''भगवन् ! किस पक्ष में, किस तिथि को और किस विधि से यह व्रत करना चाहिए ?''

''राजेन्द्र ! आश्विन मास के कृष्ण पक्ष में दशमी के उत्तम दिन श्रद्धायुक्त चित्त से प्रातःकाल स्नान करो । फिर मध्याह्नकाल में स्नान करके एकाग्रचित्त हो एक समय भोजन करो तथा रात्रि में भूमि पर सोओ । एकादशी के दिन स्नान आदि के बाद भक्तिभाव से निम्नांकित मंत्र पढ़ते हुए उपवास का नियम ग्रहण करो :

अद्य स्थित्वा निराहारः सर्वभोगविवर्जितः ।
श्वो भोक्ष्ये पुण्डरीकाक्ष शरणं मे भवाच्युत ॥

'कमलनयन भगवान नारायण ! आज मैं सब भोगों से अलग हो निराहार रहकर कल भोजन करूँगा । अच्युत ! आप मुझे शरण दें ।'

(पद्म पुराण, उ. खंड : ६०.२३)

मध्याह्नकाल में पितरों की प्रसन्नता के लिए शालग्राम-शिला के सम्मुख विधिपूर्वक श्राद्ध करो तथा दक्षिणा से ब्राह्मणों का सत्कार करके उन्हें भोजन कराओ । पितरों को दिये हुए अन्नमय पिंड को सूँघकर गाय को खिला दो । फिर धूप और गंध आदि से भगवान हृषीकेश का पूजन करके रात्रि में उनके समीप जागरण करो । द्वादशी के दिन पुनः भक्तिपूर्वक श्रीहरि की पूजा करो । उसके बाद ब्राह्मणों को भोजन कराके भाई-बंधु, नाती और पुत्र आदि के साथ स्वयं मौन होकर भोजन करो ।

राजन् ! इस विधि से आलस्यरहित होकर यह व्रत करो । इससे तुम्हारे पितर भगवान विष्णु के वैकुंठ धाम में चले जायेंगे ।''

भगवान श्रीकृष्ण कहते हैं : ''राजन् ! राजा इन्द्रसेन से ऐसा कहकर देवर्षि नारद अंतर्धान हो गये । राजा ने रानियों, पुत्रों और भृत्यों सहित उस उत्तम व्रत का अनुष्ठान किया ।

कुंतीनंदन ! व्रत पूर्ण होने पर आकाश से फूलों की वर्षा होने लगी । इन्द्रसेन के पिता गरुड़ पर आरूढ़ होकर श्रीविष्णुधाम को चले गये और इन्द्रसेन भी निष्कंटक राज्य का उपभोग करके अपने पुत्र को राजसिंहासन पर बिठाकर स्वयं स्वर्गलोक को चले गये । इस प्रकार मैंने तुम्हारे सामने 'इंदिरा एकादशी' व्रत के माहात्म्य का वर्णन किया है । इसको पढ़ने और सुनने से मनुष्य सब पापों से मुक्त हो जाता है ।''

यम-यातना से मुक्त करनेवाला व्रत

(पापांकुशा/पाशांकुशा एकादशी : २५ अक्टूबर)

युधिष्ठिर ने पूछा : ''मधुसूदन ! अब आप कृपा करके यह बताइये कि आश्विन मास के शुक्ल पक्ष में किस नाम की एकादशी होती है और उसका माहात्म्य क्या है ?''

भगवान श्रीकृष्ण बोले : ''राजन् ! आश्विन के शुक्ल पक्ष में जो एकादशी होती है, वह 'पापांकुशा' नाम से विख्यात है । वह सब पापों को हरनेवाली, स्वर्ग और मोक्ष प्रदान करनेवाली, शरीर को निरोग बनानेवाली तथा सुंदर स्त्री, धन एवं मित्र देनेवाली है । यदि अन्य कार्य के प्रसंग से भी मनुष्य एकमात्र इस एकादशी का उपवास कर ले तो उसे कभी यम-यातना नहीं प्राप्त होती ।

राजन् ! एकादशी के दिन उपवास और रात्रि-जागरण करनेवाले मनुष्य अनायास ही दिव्य रूपधारी, चतुर्भुजी, गरुड़ की ध्वजा से युक्त, हार से सुशोभित और पीताम्बरधारी होकर भगवान विष्णु के धाम को जाते हैं । राजेन्द्र ! ऐसे पुरुष मातृपक्ष, पितृपक्ष तथा पत्नी के पक्ष की दस-दस पीढ़ियों का उद्धार कर देते हैं ।

एकादशी के दिन सम्पूर्ण मनोरथ की प्राप्ति के लिए मुझ वासुदेव का पूजन करना चाहिए । जितेन्द्रिय मुनि चिरकाल तक कठोर तपस्या करके जिस फल को प्राप्त करता है, वह फल उस दिन भगवान गरुड़ध्वज को प्रणाम करने से ही मिल जाता है ।

पृथ्वी पर जितने तीर्थ और पवित्र देवालय हैं, उन सबके सेवन का फल भगवान विष्णु के नाम-कीर्तनमात्र से मनुष्य प्राप्त कर लेता है ।

जो पुरुष उस दिन सुवर्ण, तिल, भूमि, गौ, अन्न, जल, जूते और छाते का दान करता है, वह कभी यमराज को नहीं देखता । नृपश्रेष्ठ ! दरिद्र पुरुष को भी चाहिए कि वह स्नान, जप-ध्यान आदि करने के बाद यथाशक्ति होम, यज्ञ तथा दान वगैरह करके अपने प्रत्येक दिन को सफल बनाये ।

जो होम, स्नान, जप, ध्यान और यज्ञ आदि पुण्यकर्म करनेवाले हैं, उन्हें भयंकर यम-यातना नहीं देखनी पड़ती । लोक में जो मानव दीर्घायु, धनाढ्य, कुलीन और निरोग देखे जाते हैं, वे पहले के पुण्यात्मा हैं । पुण्यकर्ता पुरुष ऐसे ही देखे जाते हैं । इस विषय में अधिक कहने से क्या लाभ, मनुष्य पाप करने से दुर्गति में पड़ते हैं और धर्मकार्यों से स्वर्ग में जाते हैं ।''

('पद्म पुराण' से) ❑

तीर्थोदक स्नान

जौ और तिल मिक्सी में पीसकर रख दो । मग्गे या कटोरी में थोड़ा-सा यह मिश्रण ले के थोड़े पानी में भिगो दो । फिर उससे शरीर को रगड़ के बाद में स्नान करो, आपको पापनाशक तीर्थोदक स्नान का फल मिलेगा ।

- पूज्य बापूजी

कलितारणहारा भगवन्नाम

इस कलिकाल में भवसागर से पार होने के लिए भगवन्नाम एक मजबूत नौका है, जिसकी सहायता से मनुष्य भवसागर से सरलता से पार हो सकता है। भगवन्नाम-महिमा का वर्णन करते हुए महर्षि वेदव्यासजी अपने शिष्यों को कहते हैं : **कलिर्धन्यः** अर्थात् 'कलियुग धन्य है !' व्यासजी के वचन सुनकर शिष्यों ने जिज्ञासापूर्वक प्रश्न किया कि ''गुरुजी ! कलियुग में तो पाप, दुराचार, निंदा, राग-द्वेष अधिक होता है, फिर भी आप उसे धन्य कह रहे हैं !''

व्यासजी ने कहा : ''मैं कलियुग को धन्य इसलिए कहता हूँ क्योंकि इसमें भगवान को प्राप्त करना अधिक आसान है। कलियुग में निरंतर भगवन्नाम लेनेमात्र से मनुष्य उनको प्राप्त कर सकता है। यह दूसरे युग में सम्भव ही नहीं है।''

'श्रीमद् भागवत' (१२.३.५२) में भी आता है :

कृते यद् ध्यायतो विष्णुं त्रेतायां यजतो मखैः।
द्वापरे परिचर्यायां कलौ तद्धरिकीर्तनात् ॥

'सत्ययुग में भगवान विष्णु के ध्यान से, त्रेता में यज्ञ से और द्वापर में भगवान की पूजा से जो फल मिलता था, वह सब कलियुग में भगवान के नाम-कीर्तनमात्र से प्राप्त हो जाता है।'

ऐसा कलितारण भगवन्नाम सर्व पापों को हरकर परमात्म-प्रीति जगाने का अमोघ सामर्थ्य रखता है। पापविनाशक परम कृपालु परमात्मा सबके सुहृद, परम हितैषी, निकटतम व सबके लिए सहज हैं। वे सहस्ररूपाधिपति, सहस्रनामाधिपति होते हुए भी नाम-रूप से रहित हैं। जात-पाँत, गुण-धर्म को न देखकर जो जिस नाम से उन्हें भजता है, प्रभु वैसे ही उसे मिलते हैं। उसकी समझ को अधिकाधिक परिपक्व बनाते हुए अपने दिव्य स्वरूप का ज्ञान पाने की ओर उसे प्रेरित करते हैं।

उस चैतन्यस्वरूप परमात्मा के नाम-जप के प्रताप से ही निर्बल सबल बनकर प्रबल भक्ति को पा सकते हैं। दुष्ट और कनिष्ठ श्रेष्ठ बनकर सर्वोत्कृष्ट पद को पा सकते हैं। यहाँ तक कि एक बार गलती से, कपट से या अन्य किसी भी भाव से कोई भगवन्नामरूपी डोरी से परमात्मा का दामन पकड़ लेता है तो फिर पकड़नेवाला कितना भी छुड़ाना चाहे पर प्रभु उसे छोड़ते नहीं।

भगवन्नाम-जप के प्रभाव से वह भगवान के प्रेमपाश में बँध जाता है। पूतना ने कपट से प्रभु को पकड़ा पर भगवान ने जब उसे पकड़ा तो ऐसा पकड़ा कि उसने छुड़ाना चाहा तो भी नहीं छोड़ा, पूतना को पार कर दिया। इस प्रकार अंतःस्थल की परा वाणी के प्रकाशक उस प्रभु का कोई दम्भ, पाखंड या कामनावश भी नाम-सुमिरन करे तो भी उसका कल्याण निश्चित ही होता है। दुनिया में मनुष्य को अपने नाम का मोह ही दुःख देता है और जन्म-मरण के चक्कर में डालता है। अतः कीर्ति का मोह छोड़ने के लिए नामकीर्तन-जप के सिवा कोई उपाय नहीं है। भगवान का नाम 'मम' के भार की जगह 'सम' का सार सिखाता है। ममता को हटाकर समता के ऊँचे सिंहासन पर प्रतिष्ठित करता है। समता आयी तो सार, नहीं तो सब भार - यह सिद्धांत भगवन्नाम-सुमिरन करते-करते शांत होने से ही प्रत्यक्ष अनुभव होता है। जप से लोभ मिटकर लाभ-ही-लाभ होता है, मनुष्य की इच्छानुसार फिर चाहे वह भौतिक लाभ हो या आध्यात्मिक लाभ।

गिरधर नाम का गान करते हुए भक्तिमती मीरा ने नाचकर प्रभु को रिझा लिया तो अकाल पुरुष आदि नामों का सुमिरन करते हुए उसमें शांत

होकर गुरु नानकदेवजी ने प्रभु को पा लिया। 'विठ्ठल, रामकृष्ण, हरि' - इन भगवन्नामों से संत तुकारामजी ने भगवान की निष्काम उपासना कर पूर्णता प्राप्त की तो उन्हीं पांडुरंग का नाम जपते-जपते ब्रह्मज्ञानी सद्गुरु विसोबा खेचर के श्रीचरणों में पहुँचने की यात्रा कर संत नामदेवजी ने नाम-रूपरहित परमात्मा का साक्षात्कार कर लिया। **भगवन्नाम-जप से स्वार्थपरता सर्वार्थता में बदल जाती है और सर्वार्थता परमार्थता में परिणत होकर जीवन को पूर्णता की ओर अग्रसर करती है।** बिजलीघर से तो तार जुड़ा है ही, बस भगवन्नाम की पुकार से अहंकार का बटन दबाया कि प्रकाश-ही-प्रकाश ! ☐

यह प्रेमपंथ ऐसा ही है...

यह प्रेमपंथ ऐसा ही है,
जिसमें सब कोई चल न सके।
कितने ही बढ़े, थके, फिसले,
कुछ आगे गये सम्हल न सके॥
जो कुछ न चाहते हैं जग में,
वे कहीं न रुकते हैं मग[१] में।
है सुंदर साँची प्रीति वही,
जो उर से कभी निकल न सके॥
वे प्रेमी ही अधिकारी हैं,
जो इतने धीरजधारी हैं।
चाहे कितना ही दुःख आये,
तन जाये पर प्रण टल न सके॥
वे मिलते सब कुछ खोने से,
उर का मल धुलता रोने से।
प्रियतम का वह प्रेमी कैसा,
जो विरह-अग्नि में जल न सके॥
जो भोग सुखों का त्यागी है,
प्रभुता से पूर्ण विरागी है।
वह पथिक पहुँच पाता जिसको,
यह मन की माया छल न सके॥

- संत पथिकजी

(१) मार्ग

निःस्वार्थ सेवा की महिमा

(पूज्य बापूजी का सत्संग-प्रसाद)

लालजी महाराज ने एक बाई की बात बतायी कि हमारे यहाँ एक माई थी। पति मर गये थे, विधवा थी। गाँव के सभी लोगों से कहती : ''कोई कामकाज है तो बोलो !''

कोई कहता : ''सब्जी ले आओ।'' तो लाकर दे देती। जितने पैसे बचते उतने वापस... !

गाँव की किसी बाई ने कहा : ''यह चीज तो अच्छी नहीं है।'' तो वह कहती : ''कोई बात नहीं, लाओ, वापस देकर आती हूँ। दुकानवाले को बोलकर आयी हूँ कि अच्छी नहीं लगेगी तो वापस लाऊँगी।'' वह चीज वापस करके आती। गाँवभर में किसीके भी यहाँ कोई भी काम हो तो कर आती। काम करावें तो सभी लोग बोलते : 'इधर ही खा ले रोटी, इधर ही खा ले।' इस तरह वह जीती थी।

जब उसके मरने के दिन आये तो लोगों ने पूछा : ''तुम्हारे लिए हम क्या करें ? श्राद्ध करें तुम्हारा ?'' तो उसने कहा : ''अरे नहीं-नहीं, कोई जरूरत नहीं है। सब रामस्वरूप हैं। राम की सृष्टि में राम की तो सेवा की है। मैं तो राम में जाऊँगी। मेरा श्राद्ध क्या करना !''

बड़े आनंद में रहती थी, बड़ी सच्ची माई थी। उस माई की लालजी महाराज के हृदय में तो जगह हुई, मैंने सुना तो मुझे भी लगा कि वह आज होती तो हम लोग भी दर्शन करते।

तो दूसरों की सेवा में प्रभु की सेवा देखो लेकिन केवल उनमें ही प्रभु दिखे ऐसा नहीं, अपनेसहित सबमें प्रभु दिखे। जहाँ-जहाँ तुम्हारा मन और बुद्धि जाय वहाँ-वहाँ नाम-रूप सबको माया समझकर हटा दो तो उनकी गहराई में जो है वह चैतन्य है। ☐

सद्गुरु से क्या सीखें ?

(पूज्य बापूजी के सत्संग-प्रसाद से)

साधक को १६ बातें अपने गुरु से जान लेनी चाहिए अथवा गुरु को अपनी ओर से कृपा करके शिष्य को समझा देनी चाहिए । इन १६ बातों का ज्ञान साधक के जीवन में होगा तो वह उन्नत रहेगा, स्वस्थ रहेगा, सुखी रहेगा, संतुष्ट रहेगा, परम पद को पाने का अधिकारी हो जायेगा ।

पहली बात, गुरुजी से संयम की साधना सीख लेनी चाहिए ।

ब्रह्मचर्य की साधना सीख लो । गुरुजी कहेंगे : ''बेटा ! ब्रह्म में विचरण करना ब्रह्मचर्य है । शरीरों को आसक्ति से देखकर अपना वीर्य क्षय किया तो मन, बुद्धि, आयु और निर्णय दुर्बल होते हैं । दृढ़ निश्चय करके **'ॐ अर्यमायै नमः ।'** का जप कर, जिससे तेरा ब्रह्मचर्य मजबूत हो । ऐसी किताबें न पढ़, ऐसी फिल्में न देख जिनसे विकार पैदा हों । ऐसे लोगों के हाथ से भोजन मत कर, मत खा, जिससे तुम्हारे मन में विकार पैदा हों ।''

दूसरी बात गुरु से सीख लो, अहिंसा किसे कहते हैं और हम अहिंसक कैसे बनें ?

बोले : ''मन से, वचन से और कर्म से किसीको दुःख न देना ही अहिंसा है ।

ऐसी वाणी बोलिये, मन का आपा खोय ।
औरन को शीतल करे, आपहुँ शीतल होय ॥

जो दूसरे को ठेस पहुँचाने के लिए बोलता है, उसका हृदय पहले ही खराब हो जाता है । उसकी वाणी पहले ही कर्कश हो जाती है । इसलिए भले ही समझाने के लिए रोकें, टोकें, डाँटें पर मन को शीतल बनाकर, राग से नहीं, द्वेष से नहीं, मोह से नहीं । राग, द्वेष और मोह - ये तीनों चीजें आदमी को व्यवहार व परमार्थ से गिरा देती हैं । श्रीकृष्ण का कर्म रागरहित है, द्वेषरहित है, मोहरहित है । अगर मोह होता तो अपने बेटों को ही सर्वोपरि कर देते । अपने बेटों के लक्षण ठीक नहीं थे तो ऋषियों के द्वारा शाप दिलाकर अपने से पहले उनको भेज दिया, तो मोह नहीं है । गांधारी को मोह था तो इतने बदमाश दुर्योधन को भी वज्रकाय बनाने जा रही थी ।

गुरु से यह बात जान लें कि हम हिंसा न करें । शरीर से किसीको मारें-काटें नहीं, दुःख न दें । वाणी से किसीको चुभनेवाले वचन न कहें और मन से किसीका अहित न सोचें ।''

तीसरी बात पूछ लो कि गुरुदेव ! सुख-दुःख में समबुद्धि कैसे रहें ?

गुरुदेव कहेंगे कि ''कर्म भगवान के शरणागत होकर करो । जब मैं भगवान का हूँ तो मन मेरा कैसे ? मन भी भगवान का हुआ । मैं भगवान का हूँ तो बुद्धि मेरी कैसे ? बुद्धि भी भगवान की हुई । अतः बुद्धि का निर्णय मेरा निर्णय नहीं है ।

भगवान की शरण की महत्ता होगी तो वासना गौण हो जायेगी और नियमनिष्ठा मुख्य हो जायेगी । अगर वासना मुख्य है तो आप भगवान की शरण नहीं हैं, वासना की शरण हैं । जैसे शराबी को अंतरात्मा की प्रेरणा होगी कि 'बेटा ! आज दारू पी ले; बारिश हो गयी है, मौसम गड़बड़ है ।' भगवान प्रेरणा नहीं करते, अपने संस्कार प्रेरणा करते हैं । झूठा, कपटी, बेईमान आदमी बोलेगा : 'भगवान की प्रेरणा हुई' लेकिन यह बिल्कुल झूठी बात है, वह अपने को ही ठगता है । **'समत्वं योग उच्यते ।'** हमारे चित्त में राग न हो, द्वेष न हो और मोह न हो तो हमारे कर्म समत्व योग हो जायेंगे । श्रीकृष्ण, श्रीरामजी, राजा जनक, मेरे लीलाशाह

प्रभु, और भी ब्रह्मज्ञानी महापुरुषों के कर्म समत्व योग हो जाते हैं। सबके लिए अहोभाववाले, गुदगुदी पैदा करनेवाले, सुखद, शांतिदायी व उन्नतिकारक हो जाते हैं। ज्ञानी महापुरुष के सारे कर्म सबका मंगल करनेवाले हो जाते हैं। ऐसा ज्ञान-प्रकाश आपके भी जीवन में कब आयेगा ? जब आप राग-द्वेष और मोह रहित कर्म करोगे। ईश्वर सबमें है, अतः सबका मंगल, सबका भला चाहो। कभी किसीको डाँटो या कुछ भी करो तो भलाई के लिए करो, वैर की गाँठ न बाँधो तो समता आ जायेगी।''

चौथी बात पूछ लो कि वास्तविक धर्म क्या है ?

गुरु कहेंगे : ''जो सारे ब्रह्मांडों को धारण कर रहा है वह धर्म है, सच्चिदानंद धर्म। जो सत् है, चेतन है, आनंदस्वरूप है, उसकी ओर चलना धर्म है। जो असत् है, जड़ है, दुःखरूप है उसकी तरफ चलना अधर्म है। आप सत् हैं, शरीर असत् है। शरीर को 'मैं' मानना और 'सदा बना रहूँ' - ऐसा सोचना रावण के लिए भी भारी पड़ गया था तो दूसरों की क्या बात है ! शरीर कैसा भी मिले पर छूट जायेगा लेकिन मैं अपने-आपसे नहीं छूटता हूँ, ऐसा ज्ञान गुरुजी देंगे। तुम सत् हो, सुख-दुःख और शरीर की जन्म-मृत्यु असत् है। तुम चेतन हो, शरीर जड़ है। हाथ को पता नहीं मैं हाथ हूँ, पैर को पता नहीं मैं पैर हूँ लेकिन तुम्हें पता है यह हाथ है, यह पैर है। तुम सत् हो, तुम चेतन हो तो अपनी बुद्धि में सत्ता का, चेतनता का आदर हो और तदनुरूप अपनी बुद्धि व प्रवृत्ति हो तो आप दुःखों के सिर पर पैर रख के परमात्म-अनुभव के धनी हो जायेंगे।

गुरु से धर्म सीखो। मनमाना धर्म नहीं। कोई बोलेगा : 'हम पटेल हैं, उमिया माता को मानना हमारा धर्म है।', 'हम सिंधी हैं, झुलेलाल के आगे नाचना, गाना और मत्था टेकना हमारा धर्म है।', 'हम मुसलमान हैं, अल्ला होऽऽ अकबर... करना हमारा धर्म है।' यह तो मजहबी धर्म है। आपका धर्म नहीं है। लेकिन प्राणिमात्र का जो धर्म है, वह सत् है, चित् है, आनंदस्वरूप है। अपने सत् स्वभाव को, चेतन स्वभाव को, आनंद स्वभाव को महत्त्व देना। न दुःख का सोचना, न दुःखी होना, न दूसरों को दुःखी करना। न मृत्यु से डरना, न दूसरों को डराना। न अज्ञानी बनना, न दूसरों को अज्ञान में धकेलना। यह तुम्हारा वास्तविक धर्म है, मानवमात्र का धर्म है। फिर नमाजी भले नमाज पढ़ें कोई हरकत नहीं, झुलेलालवाले खूब झुलेलाल करें कोई मना नहीं लेकिन यह सार्वभौम धर्म सभीको मान लेना चाहिए, सीख लेना चाहिए कि आपका वास्तविक स्वभाव सत् है, चित् है, आनंद है। शरीर नहीं था तब भी आप थे, शरीर है तब भी आप हो और शरीर छूटने के बाद भी आप रहेंगे। शरीर को पता नहीं मैं शरीर हूँ किंतु आपको पता है। वैदिक ज्ञान किसीका पक्षपाती नहीं है, वह वास्तविक सत्य धर्म है। गुरु से सत्य धर्म सीख लो।'' (क्रमशः) ❑

अमृतबिंदु

✽ जिनकी बहुत तड़प होती है, प्यास होती है वे इसी जन्म में गुरु के गुरु-तत्त्व को पूर्णरूप से पाने का इरादा कर लेते हैं। जितना-जितना आप गुरु-तत्त्व को पाने का इरादा करोगे उतना-उतना आप अपनी बाहर की आसक्ति और गंदी आदतें छोड़ने में सफल हो जाओगे।

✽ संसार का सुख जीव को धोखे में डालता है। संसार के कितने भी सुख कोई भोग ले परंतु वह सच्चे सुख और शांति से वंचित रह जाता है, उसे मुक्ति नहीं मिलती, परम पद नहीं मिलता, भगवान नहीं मिलते लेकिन जिनको भगवान मिलते हैं वे संसार के सारे सुख भी मुफ्त में भोगते हैं और आसक्ति का बंधन भी उन्हें नहीं लगता।

- पूज्य बापूजी

बिगड़ी बनाते हैं सद्गुरु

वाराणसी में एक बड़े प्रसिद्ध ज्योतिषी हो गये, जिनकी भविष्यवाणी सही सिद्ध होती थी। देवराहा बाबा की एक भक्त महिला ने उन्हें अपनी कुंडली दिखायी। ज्योतिषी ने कहा : ''वैधव्य-योग है। दुर्घटना के कारण तुम्हारे पति के प्राण संकट में फँस जायेंगे।''

वह महिला घबरायी। अपनी जन्मपत्री लेकर वह देवराहा बाबा के पास गयी। उनके चरणों में प्रार्थना की। बाबा ने जन्मपत्री लेकर मंच पर बैठे-बैठे ही उस पर उँगली से कुछ लिखा और महिला से एक मंत्र बुलवाया। फिर पत्री लौटाते हुए बोले : **''तुम्हारे सौभाग्य में वासुदेव की प्रतिष्ठा हो गयी। जा, कुछ नहीं बिगड़ेगा।''**

बाबा की बात सुनकर वह महिला निश्चिंत हो गयी। उसके लिए तो बस, **मंत्रमूलं गुरोर्वाक्यं...** बाबा के वाक्य उसके लिए महामंत्र सिद्ध हो गये। वह दम्पति कई वर्षों तक जीवित रहा और समय आने पर उस महिला ने पति से आज्ञा लेकर प्राण छोड़े। आत्मबलसम्पन्न सद्गुरु की कृपा से भयंकर दुष्प्रारब्ध भी टल जाता है या उसका प्रभाव 'शूली में से काँटा' जैसा हो जाता है। परंतु समस्याओं का कोई अंत नहीं है। सद्गुरु इस बात से अधिक राजी नहीं होते कि हम एक के बाद एक समस्या को हल करके फिर-फिर से दुःखी होते रहें। करुणा-वरुणालय सद्गुरु क्या चाहते हैं ?

वे चाहते सब झोली भर लें,
निज आत्मा का दर्शन कर लें।

वेदांत-ज्ञान से ओतप्रोत 'श्री आशारामायण' के १०८ पाठ कर असंख्य लोगों ने दुष्प्रारब्ध को मिटाने के लाभ के साथ आत्मदृष्टि की प्राप्ति का लाभ भी लिया है। आप-हम वह गुरुकुंजी पा लें जिससे हर समस्या का ताला खुल जाता है। ☐

भाव-अभाव का सिद्धकर्ता

जाग्रत अवस्था में स्वप्न आदि अवस्थाओं का अभाव होता है परंतु जाग्रत को सिद्ध करनेवाले आत्मस्वरूप का अभाव नहीं होता। जाग्रत अवस्था में स्वप्न आदि का अभाव भी आत्मा से ही सिद्ध होता है। स्वप्न एवं सुषुप्ति के समय इन अवस्थाओं के अस्तित्व व अन्य अवस्थाओं के अभाव का सिद्धकर्ता तुम्हारा आत्मस्वरूप ही है।

इसी प्रकार जब समाधि में चित्त की एकाग्र अवस्था होती है, तब जाग्रत आदि अवस्थाओं का अभाव होता है परंतु उस काल में जाग्रत आदि विक्षेप-अवस्था के अभाव को तथा समाधिरूप एकाग्रता के भाव को सिद्ध करनेवाले आत्मा का अभाव नहीं होता।

जब सत्त्वगुण होता है तब रजोगुण और तमोगुण नहीं होते परंतु सत्त्वगुण के भाव और रजोगुण-तमोगुण के अभाव का जो सिद्धकर्ता आत्मा है, उसका अभाव नहीं होता। वैसे ही रजोगुण और तमोगुण के समय उनके भाव तथा उनसे अन्य गुणों के अभाव के सिद्धकर्ता आत्मा का अभाव नहीं होता। जब अज्ञान होता है तब ज्ञान नहीं होता और जब ज्ञान होता है तब अज्ञान नहीं होता पर ज्ञान और अज्ञान को सिद्ध करनेवाला आत्मा सर्वदा है।

जब शुभ संकल्प, चिंतन, निश्चय व शुभ अहंपन होता है, तब अशुभ संकल्प, चिंतन, निश्चय व अशुभ अहंपन नहीं होता। वैसे ही जब अशुभ संकल्प, चिंतन, निश्चय व अशुभ अहंपन होता है, तब शुभ संकल्प, चिंतन, निश्चय, शुभ अहंपन नहीं होता परंतु दोनों अवस्थाओं में उनके सिद्धकर्ता आत्मा का अभाव नहीं होता।

('आध्यात्मिक विष्णु पुराण' से) ☐

जीने की कला

(पूज्य बापूजी के सत्संग-प्रसाद से)

अशांति क्यों नहीं जाती ?

आज भौतिक साधन बहुत हैं पर घर-घर में अशांति है। आवागमन के लिए रेलगाड़ियाँ बढ़ी हैं, हवाई जहाज बढ़े हैं, बातचीत के लिए तार, टेलीफोन और वायरलेस बढ़े हैं, मनोरंजन के लिए रेडियो और सिनेमा जैसे साधन बढ़े हैं पर मनुष्य के मन की अशांति नहीं गयी है। वह बढ़ती ही गयी है क्योंकि हमने योग, उपासना और ज्ञान का सहारा लेना छोड़ दिया है। पहले हमारे यहाँ लोग दिन में तीन बार संध्या करते थे। संध्या के समय प्राणायाम, जप, ध्यान आदि करते थे तो मन शुद्ध, सात्त्विक और शांत रहता था। एक-दूसरे के प्रति द्वेषभाव कम रहता था, जिससे झगड़े कम होते थे और शांति रहती थी। अभी यदि हम तीन बार संध्या नहीं कर सकते तो दो बार करें। दो बार भी नहीं कर सकते तो एक बार तो करें।

भगवान को देखने की दूरबीन

सब भगवान की माया है। दुःख आता है तो लोग बाह्य साधनों की तरफ देखते हैं। द्रौपदी भी जब तक बाह्य साधनों की तरफ देख रही थी, तब तक उसे निराशा ही हाथ लग रही थी। फिर जब वह हृदय की गहराई में गयी तो भगवान एवं भगवान की शक्तियाँ वहीं तो थीं।

भगवान तो पास ही हैं। एक ही सत्ता सबमें व्याप रही है। वह त्रिगुणातीत है, ढका हुआ है। भगवान को देखना है तो दूरबीन चाहिए। बाह्य दूरबीन नहीं, इसके लिए दूसरी विशेष दूरबीन चाहिए - अंतःकरण की दूरबीन। पहले अंतःकरण को शुद्ध करें - एकाग्र करें, फिर आत्मविचार करके आत्मज्ञान से अज्ञान की निवृत्ति करें तो परमात्मा प्रकट हो जायेगा, आत्मसाक्षात्कार हो जायेगा। अथवा तो पहले मुक्तात्मा होने की, तत्त्वज्ञान की तड़प बढ़ायें, फिर मन, बुद्धि और अंतःकरण से संबंध-विच्छेद कर अपने आत्मवैभव में जाग जायें।

तीन के सम्मिलन से जीवन नंदनवन

हमारा दैनिक कौटुम्बिक जीवन इतना अशांत क्यों होता जा रहा है ? क्योंकि हमारे अंदर **भावबल, क्रियाबल और प्राणबल** इन तीनों शक्तियों का समन्वय नहीं होता है। यदि हमारे जीवन में इन तीनों बलों का समन्वय हो जाय तो जीवन चमक जाता है। यदि भावबल शुद्ध नहीं है तो व्यक्ति समाज को पतन की तरफ ले जानेवाले काम करता है, जैसे - मारना-पीटना, शराब पीना और अन्य बुरे काम करना।

घर में देवरानी का भावबल प्रबल है और प्राणबल कमजोर है व जेठानी का प्राणबल प्रबल है और भावबल कमजोर है तो वे दोनों लड़ेंगी। यदि आमने-सामने नहीं लड़ें तो आँखों से तो एक-दूसरे को नाराजगी के भाव से देखेंगी ही। और कुछ नहीं तो बर्तन बजाकर या बच्चों को पीटकर अपना गुस्सा प्रकट करेंगी। दोनों बलों का समन्वय नहीं है अतः लड़ती हैं। पिता में यदि इन बलों का अभाव हुआ तो वे सब सदस्यों को ठीक ढंग से नहीं चला सकेंगे, अपने से हीन व कमजोर को दबायेंगे और नाम लेंगे अनुशासन का।

अनुशासन में प्यार और सामनेवाले का हित तथा शुद्ध ज्ञान और मंगल भावना नहीं भरी है तो वह अनुशासन अहंपोषक और शासितों को सतानेवाला हो जायेगा। बिना प्यार का अनुशासन झगड़ा, तंगदिली और खिंचाव लायेगा। प्यार में से अनुशासन निकला तो मोह बन जायेगा। पिता का अनुशासन हो पर प्यार से मिला हुआ हो। इस प्रकार अगर हमारे जीवन में इन तीनों बलों का समन्वय नहीं है तो कुटुम्ब चलाने में असफल हो जायेंगे। **(शेष पृष्ठ २८ पर)**

परिपक्व बनायेगी नियम-निष्ठा

(पूज्य बापूजी का सत्संग-प्रसाद)

नियम-निष्ठा आदमी को बहुत ऊँचा उठाती है। जो नियम-निष्ठा के लिए बोलता है : 'अच्छा, देखेंगे, हो सका तो करूँगा, कोशिश करूँगा, भगवान की कृपा होगी...' ऐसा लोग जब बोलते हैं तो मुझे बड़ा दुःख होता है, आश्चर्य होता है कि यह कोई बात है ! कोई अच्छी बात आयी तो 'फिर देखेंगे... सोचूँगा...।' अच्छाई को पाने के लिए तो नियम-निष्ठा लेनी पड़ती है, व्रत लेना पड़ता है।

व्रतेन दीक्षामाप्नोति...

कुछ ऐसे संत लोग होते हैं भाई... सुबह उठे, नहाये-धोये, ध्यान-भजन किया लेकिन जब तक नियम नहीं किया तब तक चाहे कितनी भी भूख लगे तो भी दूध तक नहीं पियेंगे। नहीं पीना है तो नहीं पीना है, फिर चाहे दस बज गये, ग्यारह बज गये, बारह बज गये, एक बज गया, दो बज गये तो क्या है ! अपना नियम पूरा करना है तो करना है।

बिना नियम के खा लिया, बिना नियम के पी लिया तो जीवन में क्या बरकत आयेगी ! तो नियम-निष्ठा से तप में सफलता आती है। कोई ऊँचे पद पर हैं, हट्टेकट्टे हैं तो ऊँची गद्दी पर बैठने से ऐसे नहीं हुए अपितु उन्होंने जो ज्ञानार्जन किया, भोजन किया वह पचाया है, तभी ऐसे दिख रहे हैं। ऐसे ही जिनकी आध्यात्मिक ऊँचाई है उनकी वह ऊँचाई केवल सुन के, बोल के नहीं हुई है अपितु उन्होंने अपना पचाया है, अपने को ढाला है। मन के कहने में पतंगे की नाईं, तितली की नाईं इधर-उधर नहीं गये, वे ही परिपक्व हुए हैं।

जब बाहर की विद्या के लिए भी तपस्या होती है, तब विद्या चमकती है तो यह तो ब्रह्मविद्या है। इसके लिए सात्त्विक तप चाहिए, नियम-निष्ठा चाहिए। कभी किया - कभी नहीं किया, कभी चल दिया... जैसा मन को अच्छा लगे वैसा करता रहेगा तो पतन हो के ही रहेगा। जैसा मन में आया वैसा करेंगे तो मन कमजोर हो जायेगा, फिर भूत-प्रेतों का मन भी आपको प्रभावित कर देगा। ऐसा क्यों कमजोर बनना कि किसीका भी मन अपने को प्रभावित कर दे ! ❑

(पृष्ठ २७ से 'जीने की कला' का शेष) योग की कुछ सामान्य तरकीबों का उपयोग करके हम इन तीनों बलों का अपने में सामंजस्य कर सकते हैं। जो बल कमजोर है उसको प्रबल कर सकते हैं।

प्रार्थना और पुकार से भावनाओं का विकास होता है, भावबल बढ़ता है। प्राणायाम से प्राणबल बढ़ता है, सेवा से क्रियाबल बढ़ता है और सत्संग से समझ बढ़ती है। भावबल, प्राणबल और क्रियाबल के विकास एवं ऊँची समझ से सहज समाधि का अपना स्वभाव बन जाता है तथा जीवन चमक उठता है। अपनी जीवनदृष्टि भी ऐसी होनी चाहिए कि त्याग भी नहीं, भोग भी नहीं अपितु समग्र जीवन सहज समाधि हो जाय। साधक की यह अभिलाषा होनी चाहिए। ❑

भारत के महान आध्यात्मिक पुरुष और हिन्दू समाज के पुनरुत्थानकर्ता हैं बापू

आपकी साधना-शक्ति से उत्पन्न अपूर्व सात्त्विक ऊर्जा के कारण भीषण हेलिकॉप्टर दुर्घटना भी आपको हानि न पहुँचा सकी। हमें इसकी अपार प्रसन्नता है। 'अखिल भारत हिन्दू महासभा' की ओर से हम अनंत प्रसन्नता प्रकट करते हैं कि भारत के महान आध्यात्मिक पुरुष और हिन्दू समाज के पुनरुत्थानकर्ता सुरक्षित हैं।

- श्री चन्द्रप्रकाश कौशिक

'अखिल भारत हिन्दू महासभा' के

राष्ट्रीय अध्यक्ष

सफलता की कुंजी

(पूज्य बापूजी के सत्संग-प्रसाद से)

आपको उद्यमी होना चाहिए ताकि परिस्थितियों के नागपाश में आप कभी न फँसें । आपको उद्यमी होना चाहिए समता के साम्राज्य को पाने में । आपको उद्यमी होना चाहिए मन की गंदी चालों को उखाड़ फेंकने में । आपको उद्यमी होना चाहिए इसी जन्म में जीवन्मुक्ति का विलक्षण आनंद, विलक्षण रस और विलक्षण दिव्य प्रेरणाओं का खजाना पाने के लिए ।

फिर **साहस भी होना चाहिए ।** शेर को देखो, एक हाथी के वजन के आगे कई दर्जन शेर तुल जायें । हाथी शरीर से मोटा है, बल से भी ज्यादा है लेकिन साहस नहीं है तो मारा जाता है, भगाया जाता है । एक शेर दर्जनों हाथियों को भगा देता है और छलाँग मारकर किसी एक हाथी पर चढ़ जाता है, उसका मस्तक फाड़ देता है, चीर देता है क्योंकि शेर में साहस है ।

हाथी में बचने का उद्यम तो है पर साहस और धैर्य नहीं है । अगर हाथी साहसी हो तो एक शेर तो क्या दर्जनों शेरों को अपनी सूँड़ से मार भगाये, पकड़-पकड़ के अपने पैरों तले शेरों की चटनी बनाता जाय, ऐसी योग्यताएँ उसमें हैं लेकिन साहस और धैर्य के अभाव में हाथी भयभीत हो जाता है और शेर उस पर हावी हो जाता है । **आपके जीवन में तो ऐसी कमियाँ नहीं हैं ?**

'हैं ।' नहीं तो आपके पड़ोसी, आपके राजनेता, पुलिस विभागवाले या और कोई कर्मचारी नाम लिखने की धौंस देकर, कागजात चेक करने की धौंस देकर आपकी जेब खाली कर लेते क्या ? काहे को करते हैं ? 'फलाने कागजात नहीं हैं, फलाने नहीं हैं' - ऐसा कहकर कइयों को डरा देते हैं ।

दिल्ली की घटित घटना है । एक कारवाले को रोका कि आपने कार गलत जगह पार्क की है । इतने में दलाल आ गये, बोले : ''अब दे दो न हजार-पाँच सौ रुपये, नहीं तो न्यायालय में दो-चार हजार रुपये का दंड भरना पड़ेगा, चक्कर काटोगे ।''

वह बोला : ''नहीं, इनकी आदत बिगड़ेगी और फिर मेरे दूसरे भाइयों को सतायेंगे ।''

उसने नहीं दिये पैसे । मामला न्यायालय में गया । न्यायाधीश ने कहा : ''आपने कार-पार्किंग गलत जगह पर की थी, अतः सौ रुपये दंड ।''

उसको लगा कि हमने बचने का उद्यम किया, डरे नहीं, साहसी बने तो देखो, सौ रुपये में ही काम हो गया !

दो-पाँच हजार रुपये देकर लोग घूसखोरी की परम्परा बढ़ाते हैं और देशवासियों की मुसीबत बढ़ानेवाले होते हैं । संकल्प करें कि 'अब हम रिश्वत लेंगे नहीं और रिश्वत देंगे नहीं ।' समाज की सज्जनता है इसीलिए भ्रष्टाचार करनेवालों ने, महँगाई करनेवालों ने नोच-नोचकर समाज को कहीं का नहीं रखा । प्रजा को उद्यमी होना पड़ेगा, साहसी होना पड़ेगा । **उद्यम और साहस पर्याप्त नहीं हैं, धैर्यवान भी होना पड़ेगा ।** जब जैसी परिस्थिति आये वैसा निर्णय लेना चाहिए । उद्यम, साहस आये और जहाँ-तहाँ चल पड़े... नहीं, धैर्य रखो । ये तीन और **बुद्धि, शक्ति व पराक्रम - कुल छः चीजें अपने में सँजोकर किसी भी क्षेत्र में आगे बढ़ोगे तो आप न चाहो तो भी सफलता आपके कदम चूमेगी ।** आपका लक्ष्य होना चाहिए **'बहुजनहिताय'** । अपनी वाहवाही के लिए नहीं, अपने स्वार्थ के लिए नहीं । समाजरूपी बगीचे को सीचेंगे तो परमात्मा प्रसन्न होंगे ।

बहनें भी महिला मंडल बना सकती हैं। जहाँ कहीं जुल्म हो और भाइयों की पहुँच न हो तो बहनें पहुँच जायें । उन अधिकारियों को, उन शोषकों को चूड़ियाँ भेंट कर दें और मौनपूर्वक जप करके वहाँ धरना दें तो वे लोग तौबा पुकार लेंगे।

'पेट्रोल के भाव बढ़ गये हैं, फलाने भाव बढ़ गये हैं, इतना जुल्म ! कमरतोड़ मँहगाई !' - कोई हल्ला-गुल्ला नहीं करना, किसीके लिए बुरा नारा नहीं पुकारना है। जो जहाँ पर है, वहीं नियत समय पर बस केवल एक घंटा सभी लोग मौन रख लें। अपना कामकाज तो करें लेकिन यह संकल्प भी करें कि 'विदेशों में इतने पैसे जा रहे हैं, करोड़ों-अरबों रुपये जमा हैं नोचनेवालों के, फिर भी हमको नोच रहे हैं । हे भगवान ! भारतवासियों पर कृपा करो ।' सबके हृदय में दृढ़ संकल्प हो जाय तो शोषकों की नींद हराम हो जायेगी ।

हिरण्यकशिपु की तपस्या का इतना भारी प्रताप था कि उसने वायु देवता को आदेश दे दिया कि 'प्रह्लाद को जब पसीना आये तो तुम उसी समय चलना । मेरे पुत्र को पंखा झलना न पड़े, ध्यान रखना।' ऐसे प्रभावशाली हिरण्यकशिपु का राज्य नहीं रहा, शरीर नहीं रहा तो तुम चार दिन की जिंदगी के लिए बेईमानी करके धन इकट्ठा करोगे, रिश्वत लेकर, देशवासियों को चूसकर परदेश में धन रखोगे तो कब तक रहेगा ? ❑

अमृतबिंदु

❋ व्यर्थ की चर्चा और वाणी-विलास से अपने को बचाओ । सारगर्भित बोलो, छः शब्दों में चल जाय तो दस शब्द न बोलो ।

❋ जगत को सच्चा मानकर भोगों में आसक्ति करना बड़े-में-बड़ी अशुद्धि है । शरीर को 'मैं' मानते रहोगे तो भय, चिंता, शोक लगा रहेगा । आत्मदृष्टि से ही सब दुःख दूर हो जाते हैं । - पूज्य बापूजी

अद्वय आनंद के दाता : सद्गुरु

जगदीश्वर व जगत, ब्रह्म व जीव एक-दूसरे से भिन्न नहीं हैं, दोनों एकरूप हैं - ऐसी अनुभूति करानेवाले गुरुदेव की वंदना करते हुए श्रेष्ठ गुरुभक्त एकनाथजी महाराज कहते हैं : ''सद्गुरु आत्मानंद व आत्मज्ञानरूपी वज्र का पिंजड़ा हैं, जिसके आधार से इस संसार-सागर को तैरकर जाने का साधनमार्ग सुखकारी हो जाता है। सद्गुरु द्वारा मस्तक पर हाथ रखा जाने से साधक के अहंकार का नाश हो उसे 'मैं वह ब्रह्म हूँ' - यह भाव प्राप्त हो जाता है तथा वह अब तक अप्राप्त अद्वय आनंद को अनुभव कर लेता है ।

गुरुदेव की शरण में स्थित होने से, ज्ञान के योग से शिष्य के मन में स्थित द्वैतभाव अर्थात् 'मैं' और 'तू' भिन्न-भिन्न हैं, नष्ट हो जाता है। गुरु जनार्दन स्वामी को जीव-ब्रह्म का एकत्व-भाव प्रिय है । मुझको गुरु जनार्दन प्रिय हैं। अद्वैत भाव की दृष्टि से हम दोनों एकस्वरूप हैं, यद्यपि हमारे नाम जनार्दन और एकनाथ भिन्न हैं। शिष्य के सब कुछ का गुरु में एकात्मरूप हो जाने की अनुभूति का नाम 'अनन्य शरण' भाव है । गुरुदेव मेरा मन हैं, मेरे नयन हैं, मेरा वदन उनके रूप में बोलता है । वस्तुतः वक्ता (मैं) और वचन (मेरा कथन) दोनों श्रीगुरुदेव ही हैं। गुरुदेव गति की गति (सद्गति की सद्गति, मुक्ति की मुक्ति) हैं तथा मति की मति हैं। वे प्रेरणा को प्रेरणा प्राप्त कराते हैं । गुरुदेव ही समस्त व्युत्पत्ति हैं, जो अपने अंगरूप में समस्त लोक ही बन गये हैं ।

गुरुदेव ही सब कुछ करने तथा करानेवाले हैं। वे जो भी कर रहे हैं, करा रहे हैं वह मेरे माध्यम से प्रकट हो रहा है। वे कुछ न करनेवाले अकर्ता हैं, फिर भी वस्तुतः मेरे द्वारा सब कुछ करा रहे हैं।'' **('भावार्थ रामायण' से)** ❑

फलों द्वारा स्वास्थ्य-रक्षा

शरद ऋतु में स्वाभाविक रूप से प्रकुपित पित्त के शमनार्थ प्रकृति में मधुर व शीतल फल परिपक्व होने लगते हैं। फलों में शरीर के सर्वांगीण विकास के लिए आवश्यक जीवनसत्त्व (विटामिन्स) व खनिज द्रव्यों के साथ रोगनिवारक औषधि-तत्त्व भी प्रचुर मात्रा में पाये जाते हैं।

आँवला

यह व्याधि व वार्धक्य को दूर रखनेवाला, रक्त-वीर्य व नेत्रज्योतिवर्धक तथा त्रिदोषशामक श्रेष्ठ रसायन है।

निम्नलिखित सभी प्रयोगों में आँवला-रस की मात्रा : १५ से २० मि.ली. (बालक : ५ से १० मि.ली.)

इन प्रयोगों में कलमी आँवलों की अपेक्षा देशी आँवलों का उपयोग ज्यादा लाभदायी है।

(१) धातुपुष्टिकर योग : आँवले के रस में १०-१५ ग्राम देशी घी व २ ग्राम अश्वगंधा चूर्ण मिलाकर लेने से शुक्रधातु पुष्ट होती है।

(२) ओजस्वी योग : आँवले के रस में १५ ग्राम गाय का घी व १० ग्राम शहद मिलाकर सेवन करने से ओज, तेज, बुद्धि व नेत्रज्योति की वृद्धि होती है। शरीर हृष्ट-पुष्ट होता है।

(३) हृद्ययोग : आँवले के रस में १० ग्राम पुदीने का, ५-५ ग्राम अदरक व लहसुन का रस मिलाकर लेना हृदयरोगों में बहुत लाभकारी है। इससे कोलेस्ट्रॉल भी नियंत्रित होता है।

(४) रक्तपित्तशामक योग : आँवले के रस में पेठे का रस समभाग मिलाकर सुबह-शाम पीने से नाक, मुँह, योनि, गुदा आदि के द्वारा होनेवाला रक्तस्राव रुक जाता है।

(५) दाहशामक योग आँवले व हरे धनिये के समभाग रस में मिश्री मिलाकर दिन में १ से २ बार लेने से दाह व जलन शांत हो जाती है।

(६) मिश्रीयुक्त आँवला रस उत्तम पित्तशामक तथा श्वेतप्रदर में लाभदायी है।

(७) आँवला व ताजी हल्दी के रस का सम्मिश्रण स्वप्नदोष, मधुमेह व त्वचा-विकारों में हितकर है।

(८) आँवले के रस में २ ग्राम जीरा चूर्ण व मिश्री अम्लपित्त (एसिडिटी) नाशक है।

संतरा

यह सुपाच्य, क्षुधा व उत्साहवर्धक तथा तृप्तिदायी है।

निम्नलिखित सभी प्रयोगों में संतरे के रस की मात्रा : ५० से १०० मि.ली.

(१) संतरे व नींबू का रस (१० मि.ली.) हृदय की दुर्बलता व दोष मिटानेवाला है। दिन में २ बार लें।

(२) संतरे के रस में उतना ही नारियल पानी पेशाब की रुकावट दूर कर उसे स्वच्छ व खुल के लानेवाला है।

(३) शहदसंयुक्त संतरे का रस हृदयरोगजन्य सीने के दर्द, जकड़न व धड़कन बढ़ने में लाभदायी है।

(४) संतरे के रस के साथ स्वादानुसार पुदीना, अदरक व नींबू का रस पेट के विकारों (उलटी, अरुचि, उदरवायु, दर्द व कब्ज आदि) में विशेष लाभकारी है।

(५) संतरे का रस व १० ग्राम सत्तू अत्यधिक मासिक स्राव व उसके कारण उत्पन्न दुर्बलता में

लाभदायी है । **सगर्भावस्था में इसका नियमित सेवन करने से प्रसव सुलभ हो जाता है ।**

अंगूर

ये शीघ्र शक्ति व स्फूर्तिदायी, पाचन-संस्थान को सबल बनानेवाले, पित्तशामक व रक्तवर्धक हैं ।

(१) कुछ दिनों तक केवल अंगूर के रस पर ही रहने से पित्तजन्य अनेक रोग जैसे - जलन, अम्लपित्त, मुँह व आँतों के छाले (अल्सर), सिरदर्द तथा कब्ज दूर हो जाते हैं ।

निम्नलिखित प्रयोगों में रस की मात्रा : ५० से १०० मि.ली.

(२) अंगूर व सेवफल का समभाग रस अनिद्रा में लाभदायी है ।

(३) अंगूर व मोसम्बी का समभाग रस मासिक धर्म में असह्य पीड़ा, निम्न रक्तचाप, रक्त की अल्पता व दुर्बलता में लाभदायी है ।

अनार

यह हृदय के लिए बलदायी, मन को तृप्त व उल्लसित करनेवाला तथा पित्तजन्य रोगों में पथ्यकर है ।

रस की मात्रा : ५० से १०० मि.ली.

इसके अतिरिक्त इन दिनों में पुष्ट होनेवाले फल सिंघाड़ा, अनन्नास, सीताफल, सफेद पेठा आदि स्वास्थ्य-संवर्धनार्थ सेवनीय हैं ।

सावधानी : सूर्यास्त के बाद, भोजनोपरांत, कफजन्य विकार, त्वचारोग व सूजन में फलों का सेवन नहीं करना चाहिए ।

सेवफल का शरबत - एक पौष्टिक पेय

लाभ : यह स्वादिष्ट, शक्तिवर्धक और सुपाच्य है। इसे सभी उम्र के लोग वर्षभर ले सकते हैं। यह हृदय को बल देता है, शरीर को पुष्ट व सुडौल बनाता है । वीर्य की वृद्धि करता है। अतिसार और उलटी में तुरंत लाभ करता है। दिमाग की कमजोरी व अवसाद (डिप्रेशन) को दूर कर उसे तरोताजा रखता है। महिलाओं के लिए, विशेषकर गर्भवती महिलाओं और एक साल से बड़ी उम्रवाले बच्चों के लिए बहुत गुणकारी है ।

घटक : सेवफल का ताजा रस एक लीटर और मिश्री ६५० ग्राम ।

विधि : सेवफल के रस में मिश्री मिलाकर एक तार की पक्की चाशनी बना लें । ठंडा करके काँच की शीशी में भरकर रखें ।

इस शरबत का १०-१२ दिन के अंदर उपयोग कर लेना चाहिए ।

मात्रा : सुबह-शाम २५-५० ग्राम शरबत पानी में मिलाकर लें ।

भोजन से दिव्यता कैसे बढ़ायें ?

आहार के लिए यह ज्ञान अत्यावश्यक है कि क्या खायें, कब खायें, कैसे खायें और क्यों खायें ? इन चारों प्रश्नों के उत्तर स्मरण रखने चाहिए ।

''क्या खायें ?''

''सतोगुणी, अहिंसात्मक विधि से प्राप्त खाद्य पदार्थों का ही सेवन करो ।''

''कब खायें ?''

''अच्छी तरह भूख लगे तभी खाओ ।''

''कैसे खायें ?''

''दाँतों से खूब चबाकर, मन लगा के, ईश्वर का दिया हुआ प्रसाद समझ के, प्रेमपूर्वक शांत चित्त से खाओ ।''

''किसलिए खायें ?''

''शरीर में शक्ति बनी रहे, जिससे कि सेवा हो सके इसलिए खाओ और दूसरों की प्रसन्नता के लिए खाओ परंतु अधिक अमर्यादित विधि से न खाओ। किसीको रुलाकर न खाओ। अशांतचित्त होकर भीतर-ही-भीतर स्वयं

मुझे गर्व है कि मैं बापूजी की शिष्या हूँ

मैंने प्रातःस्मरणीय परम पूज्य बापूजी से सन् १९९८ में सारस्वत्य मंत्र की दीक्षा ली थी। उस समय मैं ५ वर्ष की थी। पूज्य बापूजी से मिले सारस्वत्य मंत्र तथा नियमित जप-ध्यान के प्रभाव से जादू के क्षेत्र में मेरी उत्तरोत्तर उन्नति होती गयी और मेरे जीवन में चमत्कार होने शुरू हुए।

सन् २००२ में ९ वर्ष की उम्र में भारत सरकार द्वारा मेरा चयन 'राष्ट्रीय बाल पुरस्कार' के लिए किया गया। २००४ में मुझे 'नाट्य गौरव पुरस्कार' मिला। २००६ में भारत सरकार ने मुझे मंगोलिया में बच्चों के अंतर्राष्ट्रीय शिविर में भारत का प्रतिनिधित्व करने के लिए भेजा। २०१२ में हैदराबाद में मुझे 'परफॉर्मर ऑफ द मंथ' का एक लाख रुपये का पुरस्कार मिला। मैं विभिन्न टीवी चैनलों के टैलेंट शो तथा रियालिटी शो में भाग ले चुकी हूँ। अब तक मेरे देश-विदेश में जादू के ७००० शो हो गये हैं। इसके अलावा भारत के १३० से अधिक शहरों में आँखों पर पट्टी बाँधकर कार चला चुकी हूँ।

२०११ में औरंगाबाद (महा.) में २०,००० लोगों के सामने 'फायर एस्केप' का एक कार्यक्रम किया। इसमें मुझे ७० फुट लम्बी लोहे की चेन से बाँधकर उस पर ५५ ताले लगाये गये। फिर एक लकड़ी के बक्से में बंद करके उसे चारों तरफ से लोहे की पत्तियों से वेल्डिंग किया गया। बक्से को सूखी घास से भरे कुएँ में डालकर आग लगा दी गयी। मैं इन सारे बंधनों व जलती हुई आग से केवल ५ सेकंड में बाहर आ गयी। इतनी कम उम्र में इस तरह का खतरनाक स्टंट करनेवाली दुनिया की पहली जादूगर के रूप में मुझे नवाजा गया।

मैं वर्ष में १० महीने तक लगातार ५००-६०० शो करने के बाद भी करीब २ माह की पढ़ाई करके हर वर्ष प्रथम श्रेणी से उत्तीर्ण होती रही हूँ। वर्तमान में मैं बी.ए. के अंतिम वर्ष की छात्रा हूँ।

मैं रोज 'श्री आशारामायण' का पाठ करती हूँ। मैंने जो अनेक इनाम व पदक हासिल किये हैं, वे सारी उपलब्धियाँ तथा योग्यताएँ केवल पूज्य बापूजी के आशीर्वाद की ही देन हैं। **इतना मान-सम्मान, नाम, पैसा, पदक तथा पुरस्कार मिले पर मुझे किसी चीज का गर्व नहीं है, गर्व है तो बस एक चीज का कि मैं बापूजी की शिष्या हूँ।** ज्ञानमूर्ति पूज्य बापूजी के श्रीचरणों में कोटि-कोटि प्रणाम ! **- जादूगर आंचल, उदयपुर (राज.)**

➡ रोते हुए भी न खाओ। किसी भूखे के सामने उसे बिना दिये भी न खाओ। शुद्ध, एकांत स्थान में भगवान का स्मरण करते हुए भोजन करो। अन्याय से, हिंसात्मक विधि से उपार्जित धान्य भी न लो। जहाँ पर धर्मात्मा प्रेमी भक्त, सज्जन न मिलें वहाँ प्राणरक्षामात्र के लिए आहार करो।''

परिणामदर्शी ज्ञानियों का कथन है कि प्राणांतकाल में जिस प्रकार का अन्न, जिस कुल का, जिस प्रकार की प्रकृतिवाले दाता का अन्न उदर में रहता है, उसी गुण, धर्म, स्वभाववाले कुल में उस प्राणी का जन्म होता है।

जिस प्रकार शरीरशुद्धि हेतु सदाचार, धनशुद्धि हेतु दान, मनःशुद्धि के लिए ईश्वर-स्मरण आवश्यक है, उसी प्रकार तन-मन-धन की शुद्धि के लिए व्रत-उपवास भी आवश्यक है और व्रत-उपवास की यथोचित जानकारी भी आवश्यक है। ☐

संस्था समाचार

('ऋषि प्रसाद' प्रतिनिधि)

गाजियाबाद में तीन दिवसीय पूर्णिमा-दर्शन सत्संग-कार्यक्रम के बाद पूज्यश्री ने **३ व ४ सितम्बर** को **गाजियाबाद आश्रम** के एकांतवास के दौरान आश्रम को आध्यात्मिक स्पंदनों से परिपुष्ट किया। बापूजी ने तात्त्विक ज्ञान का रहस्य खोलते हुए भक्तों को परमात्मप्राप्ति का लक्ष्य शीघ्रातिशीघ्र पाने का मार्गदर्शन किया : ''चाहे दुनिया की कोई भी आफत आ जाय... समझो अभी हुई दुर्घटना में हेलिकॉप्टर चूर-चूर हो गया ऐसे हमारा शरीर भी चूर-चूर हो जाता तो भी हमें कोई परवाह नहीं थी। हमको जिस लक्ष्य की प्राप्ति के लिए यह मनुष्य-शरीर मिला था, वह काम हमने कर लिया है। ऐसे आप भी अपना काम कर लो। जो जानने के लिए बुद्धि मिली है, उसे जानने में बुद्धि का उपयोग कर लो। क्या जानने के लिए वह मिली है ? कि हम आत्मा हैं, शरीर नश्वर है। हम ज्ञानस्वरूप हैं, चेतन हैं, शरीर जड़ है। हम अमर हैं, शरीर मरनेवाला है।''

रजोकरी आश्रम में **५ से ८ सितम्बर** तक पूज्यश्री का एकांतवास रहा।

उत्तम-से-उत्तम पुरुषोत्तम मास का पुण्यलाभ, पुरुषोत्तम पद को पाये ब्रह्मनिष्ठ महापुरुष का सान्निध्य और उसमें भी पुरुषोत्तम तत्त्व की ऊँचाइयों में गोते लगवानेवाला पावन सत्संग-ध्यान - इस त्रिवेणी संगम का सुयोग साधकों-भक्तों को प्राप्त हुआ पूज्य बापूजी के एकांतवासों के दौरान। यही वे अनमोल घड़ियाँ होती हैं जिनमें आत्मशांति के प्यासे जिज्ञासुजन मेघस्वरूप सद्गुरु की आत्मानुभव-वर्षा से विशेष आनंदित-आह्लादित हो जाते हैं। इसका लाभ प्रत्यक्ष सान्निध्य के अलावा दूरभाष तथा 'मंगलमय इंटरनेट चैनल' द्वारा सजीव प्रसारण के माध्यम से देश-विदेश के लाखों-करोड़ों साधकों को मिला।

इसके बाद तीन दिन तक पूज्यश्री का गहन एकांतवास रहा। स्वामीजी पुनः रजोकरी आश्रम वापस आये तो अगम-निगम के इन औलिया की लगभग ७२ घंटों की एकांतिक मस्ती का अमृत छलक पड़ा और उसका पान करने के लिए आतुर थे साधक-शिष्यरूपी चातक।

वहाँ से ऋषिभूमि ऋषिकेश में ऋषियों का ज्ञानामृत लुटाने पूज्यश्री ऋषिकेश आश्रम पधारे। इस एकांतवास के बाद १८ सितम्बर को बापूजी हरिद्वार होते हुए **वाराणसी** पहुँचे। यहाँ के निवासियों को पूर्वघोषित सत्संग के अलावा एक दिन का ज्यादा लाभ मिला। **१९ (शाम) व २० सितम्बर (दोपहर)** को हुए सत्संग में हिन्दू धर्म की महिमा बताते हुए पूज्यश्री बोले : ''हिन्दू धर्म की एक महानता है कि वह हँसते-खेलते आत्मज्ञान देने की ताकत रखता है। ऐसा नहीं कि कोई भगवान कहीं है और उसने अपने किसी पीर-पैगम्बर को, पुत्र को भेज दिया। नहीं, हमारे हिन्दू धर्म का भगवान तो कण-कण में, क्षण-क्षण में, सब जगह मौजूद है। जिधर देखता हूँ, दिलबर दाता का जलवा है।''

इसके बाद बापूजी पहुँचे **छतरपुर (म.प्र.)**, जहाँ **२० (शाम) व २१ सितम्बर** को सत्संग-वर्षा हुई। □

* पूज्य बापूजी के आगामी सत्संग-कार्यक्रम *

दिनांक	स्थान	सत्संग-स्थल	सम्पर्क
२८ व २९ सितम्बर (सुबह ९ बजे तक) (पूर्णिमा-दर्शन व सत्संग)	अहमदाबाद (गुज.)	संत श्री आशारामजी आश्रम, मोटेरा, साबरमती	(०७९) ३९८७७७८८, २७५०५०१०-११
२९ (दोप.) व ३० सितम्बर	फरीदाबाद (हरियाणा)	सेक्टर-१२, कोर्ट, टाउन पार्क के पास	९८१८८६५५५६, ९८१०३९९०४३
२ अक्टूबर	शमशाबाद (उ.प्र.)	राधेधाम, ऊँचा गाँव, आगरा-शमशाबाद रोड	९७६०९१००४७, ९७१९६११३१७
१ नवम्बर	कठुआ (जम्मू)	राधा-कृष्ण मंदिर के पास, कूटा मोड़	९७९७५१७५४९,९९११००८३२२
२ नवम्बर	साम्बा (जम्मू)	विमल मुनि कॉलेज, रामगढ़	८८०३२५६०११, ९४१९१८८०८३
३ व ४ नवम्बर	जम्मू	संत श्री आशारामजी आश्रम, भगवती नगर	९४१९१९२५२८, ९४१९१११८५५
२४ से २८ नवम्बर (सुबह ९ बजे तक)	बड़ौदा (गुजरात)	नवलखी मैदान, राजमहल रोड	९४२८७६११९९, ९८२५८७९३३०

पूज्यश्री के सत्संग का रसपान करते हुए गुजरात के भक्त

मोरबी

द्वारका

जूनागढ़

२०१३ नूतन वर्ष कैलेंडर सेवा अभियान

ब्रह्मज्ञानी महापुरुषों की देह परमात्मा का साक्षात् स्वरूप होती है। संत कबीरजी कहते हैं :

अलख पुरुष की आरसी साधु का ही देह।
लखा जो चाहे अलख को इन्हीं में तू लख लेह॥

दुःख, चिंता, तनावों से भरपूर आज की जीवन-प्रणाली में जब पूज्य बापूजी जैसे महापुरुष की छवि दिख जाती है तब हृदय आश्वासन, सांत्वना और पुरुषार्थ की सत्प्रेरणा से भर जाता है, आंतरिक सुषुप्त बल जागृत हो जाता है। पूज्य बापूजी की सत्प्रेरणाप्रद छवियों एवं बलप्रद उपदेशों को जनसमाज तक पहुँचाने हेतु प्रतिवर्ष 'नूतन वर्ष कैलेंडर सेवा अभियान' चलाया जाता है।

सभी साधक भाई-बहन अपने परिचितों में नये वर्ष के कम-से-कम २५-५० कैलेंडर अवश्य बाँटें तथा अपने साधक व्यापारी मित्रों से भी कम-से-कम २५० से १००० तक कैलेंडरों का सौजन्य अवश्य करवायें। सौजन्य करानेवाले का नाम, फर्म का पता, विज्ञापन आदि कैलेंडरों पर छापा जायेगा।

कैलेंडरों के ऑर्डर के लिए संत श्री आशारामजी आश्रमों, श्री योग वेदांत सेवा समितियों एवं साधक-परिवारों के सेवाकेन्द्रों पर रसीद बुकें उपलब्ध हैं।

RNP. No. GAMC 1132/2012-14
(Issued by SSPOs Ahd, valid upto 31-12-2014)
Licence to Post without Pre-payment.
WPP No. 08/12-14
(Issued by CPMG UK. valid upto 31-12-2014)
RNI No. 48873/91
DL (C)-01/1130/2012-14
WPP LIC No. U (C)-232/2012-14
MH/MR-NW-57/2012-14
'D' No. MR/TECH/47.4/2012
Posting at Dehradun GPO between 1st to 17th of every month. * Posting at ND PSO on 5th & 6th of E.M. * Posting at MBI Patrika Channel on 9th & 10th of E.M.
बरेली (उ.प्र.)
रूड़की (उ.खं.)
बदायूँ (उ.प्र.)
पूज्य बापूजी के सत्संग-श्रवण में तल्लीन लाखों-लाखों लोग
पूर्णिमा-दर्शन हेतु पहुँची भक्तों की विशाल जनमेदनी
गाजियाबाद (उ.प्र.)
गोधरा (गुज.)